द्‌वितीय अध्याय

नरेंद्र कोहली के आलोच्य नाटकों के कथावस्तु का अनुशीलन

“नरेंद्र कोहली के आलोच्य नाटकों के कथावस्तु का अनुशीलन”

प्रस्तावना -

नाटक साहित्य का सबसे रमणीय अंग माना जाता है। साहित्य की अन्य विधाओं के समान वर्णित जीवन की कल्पना करने की आवश्यकता नाटक में नहीं पड़ती; क्योंकि उसमें हम पात्रों के जीवन को ही अपने सामने देखते हैं। नाटककार अपने आसपास के वातावरण, परिस्थितियों में घटित घटनाओं को बहुत गहराई से देखता, परखता है, हर घटना के तह तक जाकर उसकी प्रतिक्रिया और परिणामों को समझता है, अपने समाज के प्रति कर्तव्य भावना को सजग रखकर अपनी कल्पनाशक्ति से रचना का निर्माण करता है। दर्शक या पाठक नाटक देखने या केवल पढ़ने से भी उसका आनंद प्राप्त कर सकते हैं। नाटक में भूत और भविष्य दोनों ही वर्तमान के रूप में देखे जा सकते हैं। इसके साथ ही साथ नृत्य, संगीत, ध्वनि, संकेत, वेशभूषा आदि कलाओं के कारण नाटक अधिक रमणीय बन जाता है। मंचीयता नाटक का प्राणतत्व है। नाटक के रसास्वादन के लिए किसी भी प्रकार की पूर्ववर्ती दक्षता की आवश्यकता नहीं होती। इसके अतिरिक्त स्त्री-पुरुष, बालक-बूढ़े, शिक्षित-अशिक्षित, नागरिक-ग्रामीण सभी नाटक देखने या केवल पढ़ने से भी उसका आनंद प्राप्त कर सकते हैं।

नरेंद्र कोहली एक संवेदनशील नाटककार हैं। साथ ही आप व्यंग्यकार, कथाकार, प्रतिभासंपन्न लेखकों में से एक हैं। आप समाज के प्रति अपनी कर्तव्य भावना अच्छी तरह समझते हैं, इसलिए आपके नाटकों में किसी-न-किसी समस्या का रूप दिखाई पड़ता है तथा उसका हल भी मिलता है। नरेंद्र कोहली के प्रत्येक नाटक से उनकी चिंतनशीलता झलकती है। समस्या के विषय की गहराई पाठकों तक पहुँचाने के लिए आपने मिथक जैसे सशक्त माध्यम का प्रयोग अपने नाटकों में किया है। मिथक के माध्यम से नाटककार ने क्लिष्ट विषय को बहुत सफाई से पेश करके सशक्त नाटकों की अवधारणा की है। प्राचीन कथाबीजों के माध्यम से समसामाजिक समस्याओं, विषयों को उठाकर वर्तमान की व्याख्या करने का अच्छा प्रयास किया है। नरेंद्र कोहली ने मिथकीय नाटक के साथ मनोविश्लेष्णात्मक नाटक का भी अच्छी तरह सृजन किया है। नाटककार ने नए तंत्र

का प्रयोग करके एक ही दृश्य सज्जा पर दो कथाओं को मूल नाटक के पात्रों से अभिनय करके प्रस्तुत करने का प्रयत्न किया है। ज्यादातर राजनीति, सरकारी नौकरशाही, रिश्वतखोरी, शोषण, अत्याचार, सामाजिक, आर्थिक विसंगति, भ्रष्टाचार आदि पर व्यंग्य करनेवाले नाटकों की अवधारणा की है।

2.1 शम्बूक की हत्या (1975) -

'शम्बूक की हत्या' नरेंद्र कोहली की बहुचर्चित व्यंग्य कृति है। आधुनिक जीवन को रामायण के संदर्भों के साथ जोड़ने का सफल प्रयास नाटककार ने इस नाटक में किया है। रामायणकालीन ब्राह्मण के बेटे का असमय मृत्यु का मिथ लेकर वर्तमानकालीन प्रशासन की भ्रष्टता और अव्यवस्था तथा सरकारी व्यवस्था में काम करनेवाली व्यक्ति की विवशता का चित्रण, आधुनिक क्लर्क, क्रांतिबाबू, पुलिस इन्स्पेक्टर द्वारा किया है।

नाटककार ने इस नाटक में स्वातंत्र्योत्तर भारत की साधारण जनता को निष्ठूर शोषण के बीभत्स प्रतीक के साथ ही भारत की समसामायिक राजनीतिक परिस्थिति को हास्य के साथ प्रस्तुत किया है। मिथकीय कथा के संदर्भों को आधुनिक पात्रों से निरूपित करके शासन के पाप के कारण फैलते अत्याचारों की आलोचना ही 'शम्बूक की हत्या' की अवधारणा है।

'शम्बूक की हत्या' की कथा वाल्मीकि रामायण में आयी है। ''शम्बूक एक कपटी शूद्र था जिसकी तपस्या के कारण त्रोता युग में राम-राज्य के समय एक ब्राह्मण पुत्र की अकाल मृत्यु हो गई। अतः श्रीराम ने उसे मारकर मृत ब्राह्मण पुत्र को पुनः जीवन दान दिया था।''[1] रघुवंश के पंद्रहवें अध्याय में भी शम्बूक के वध का प्रसंग मिलता है। ''राम-राज्य में शासक वर्ग की सामान्य शिथिलता के कारण साधु-वेशाधारी शम्बूक दुराचार करता रहा। वाल्मीकि के आश्रम के निकट एक वृक्ष में उल्टा लटक कर तपस्या के ढोंग द्वारा अत्याचार करता रहा। उसी जनपथ में एक ब्राह्मण का पुत्र मारा गया। उसके पिता मृतक-शरीर को राज-प्रासाद के सम्मुख लिटाकर विलाप करने लगे। उसके अनुसार राजा राम की अयोग्यता के कारण ही प्रजा की यह दुस्थिति है। प्रजा वर्ग में इस घटना से विद्रोह की भावना जागृत हो उठी। राम चिंतित हो गए। शिशु हत्या का कोई कारण नहीं जान पड़ा। अंत में ध्यानमग्न राम को कपटी मुनि का पता चला जिसके कारण

शिशु की हत्या हो गई है। राम ने कपटी शुद्र सन्यासी का वध करके जनपथ में उल्लास प्रदान किया।"[2] महाभारत और श्रीमद भागवत में भी शम्बूक की कथा मिलती है।

नरेंद्र कोहली ने आज के आधुनिक समाज में शासक के पाप के कारण फैले अत्याचार, अनुशासिक सांप्रदायिक दंगे, प्रश्नवान के प्रति असहिष्णुता, सरकार के नेतृत्व में अन्याय, शासकों की नालायकी, शब्दों के पुचकर में जनता के मन में पैदा किया जानेवाला भ्रम नौकरशाही का विकट स्वरूप, भ्रष्टाचार, झूठे वादे, शक्तिसंपन्न देशों का षड़यंत्र, चोर बाजारी, पुलिस की हरकतें, शिक्षा व्यवस्था आदि के साथ सामाजिक और राजनीतिक स्थिति के अनेक व्यंग्यपूर्ण प्रसंग भी प्रस्तुत नाटक की कथावस्तु में उजागर किए हैं। नाटककार ने नाटक का 'शम्बूक की हत्या' नामकरण करके नाटक के शीर्षक में भी मिथकीयता लाई है। 'शम्बूक की हत्या' उत्कृष्ट व्यंग्य मिथक नाटक है।

नरेंद्र कोहली स्वयं चिंतनशील प्रतिभा और दूरदृष्टिवाले नाटककार हैं। स्वातंत्र्योत्तर काल में समाज में बढ़ने हुए निष्ठुर शोषण के बीभत्स प्रतीक 'शम्बूक की हत्या' करने को सरकार क्यों विमुख है, वह सवाल भी उठाया गया है। इस विमुखता के पीछे जो रहस्य है, उसका भी पर्दाफाश करने में नाटककार चुकता नहीं है। विमुखता इसलिए है कि सरकार ही इन सभी प्रकार के अन्यायों का केंद्र है, क्योंकि सरकार रूपी इस "गंदे नीच तर्क एवं ज्ञान के दुरुपयोग करनेवाले जंतु"[3] का पालन पोषण करनेवाले स्वयं वे अन्यायी या कपटी हैं। इन मूल यथार्थों के निरूपण के साथ-साथ शासन के पाप के कारण समाज में सर्वत्र व्याप्त अनेक पाशविक वृत्तियाँ नाटककार को बेचैन करती हैं। समाज को इसके परिणामों तथा उसके अस्तित्व का बोध करने की जरूरत महसूस कर उन्होंने अतीत में झाँका, वहाँ से इसे साकार करने के लिए शम्बूक जैसा सशक्त पात्र पाया। उसी के माध्यम से इस नाटक का निर्माण किया। इस नाटक में नाटककार ने पौराणिक कथा के माध्यम से आधुनिक जीवन की समस्याओं का चित्रण प्रस्तुत किया है।

कथावस्तु -

नरेंद्र कोहली का 'शम्बूक की हत्या' (1975) श्रेष्ठ मिथकीय व्यंग्य नाटक है। प्रस्तुत नाटक पौरािणिक नाटक नहीं लगता है। इसमें पौराणिक संदर्भ का सहारा लेकर आधुनिकता को स्पष्ट किया है। इस नाटक में नाटककार नरेंद्र कोहली ने पूरे देश का पक्षधर बनकर शासन से

प्रश्न पूछा- ''करोड़ों की संख्या में भारत की जनता की शारीरिक, आर्थिक और नैतिक अकाल मृत्यु के लिए दोषी कौन है ?''[4] नाटककार ने स्पष्ट किया है कि नाटक अपने आप ही पुकार-पुकार कर कहता है- ''शासन का पाप ही जनता की अकाल मृत्यु के लिए दोषी है।''[5] इस मूल कथ्य की प्रतिष्ठा में मिथक सहायक तत्व के रूप में ही स्वीकार किया गया है। साथ ही भारत की समसामायिक राजनीतिक परिस्थिति की हास्य व्यंग्यात्मक आलोचना असरदार भाषा में की गई है।

नाटक के प्रारंभ में ब्राह्मण शून्य में आँखें गड़ाए, जड़ बनाए, बिना रूके दिल्ली की सड़क पर से अपने अकालपीड़ित बेटे का शव लेकर राष्ट्रपति भवन जा रहा है। उसी दौरान वह एक कार से टकराते-टकराते बच जाता है। उसे ट्राफिक कान्स्टेबल, हेड कान्स्टेबल 'यह सड़क अपने बाप की है', 'अंधे की औलाद', 'सड़क तुझे दहेज में मिली है क्या' आदि अपशब्दों का इस्तेनाल करके डाँटते हैं। ब्राह्मण एक साधारण, ईमानदार, धार्मिक प्रवृत्ति का होने के कारण छुवा-छुत से बचकर अपने एकमात्र अकाल पीड़ित बेटे के शव को भवन के मुख्य द्वार तक पहुँचाता है। सुरक्षा व्यवस्था के लिए तैनात किए सैनिक को यह प्रेजन्ट लगता है। ब्राह्मण बड़ी दुःख से अपने अकाल-पीड़ित बेटे का शव है कहता तो सैनिक चौंककर उसे हटाने की बात करता है। ब्राह्मण के हटने से इन्कार करने पर सैनिक उसे कहता है- ''तू क्या देश की गरीबी है कि हट नहीं सकता।''[6] देश की गरीबी का कारण देश की जनता सरकारी ऑर्डर, कानून, पुलिस, कचहरी को महत्त्व नहीं देती। सैनिक को ब्राह्मण द्वारा अमीरों को हटाने की बात करने पर सैनिक सरकार और अमीरों में ''पैसा और सरकार में अवैध संबंध है। पैसा इस राजनीतिक वेश्या का यार है। पैसे ने सरकार बनाई है और सरकार ने धनवान बनाए हैं।''[7] यह विशद करता है। ऐसी स्थिति में गरीबों को हटना चाहिए धनवान नहीं हट सकते। इन विचारों को सुनकर ब्राह्मण सरकार द्वारा गरीबी हटाओ की घोषणा की आलोचना करता है। दिन दहाड़े होनेवाली हत्याएँ पुलिसों द्वारा हथियारों को दे जा रहे प्रश्रय आदि पर ब्राह्मण व्यंग्य करता है। ब्राह्मण एक प्राचीन विचार है, जो राजनीतिक गतिविधियें पर तटस्थता से चिंतन करता है। ब्राह्मण सैनिक को समझाता है कि ''सारा देश श्मशान बनता जा रहा है। आदमी मर रहा है, भूत पिश्चाच उसे खा रहे हैं, चुड़ैलें उसे नोच रही है। कोई रक्त पी रहा है, कोई मांस नोच रहा है, कोई हड्डियाँ चबा रहा है। और यह सब सरकार की अनुमति से हो रहा है। सरकार ने देश को बीभत्स रस का सुंदर उदाहरण बना दिया है।''[8] ब्राह्मण द्वारा सरकार की

आलोचना यहाँ युगबोध को साकार करती है। देश की इस दुर्गति पर प्रकाश डालते हुए ब्राह्मण सन् 1972-73 की भीषण अकाल की स्थिति पर प्रकाश डालता है। ब्राह्मण इस समय राष्ट्रपति, जो भगवान राम के स्थान पर भारत वर्ष में शासन कर रहे हैं, उनसे मिलना चाहता है, लेकिन ब्राह्मण की इन व्यंग्यपूर्ण बातों से तंग आकर सैनिक उसे अंदर ले जाकर बिठाता है। अंदर ब्राह्मण की एक व्यक्ति से भेंट होती है। वह व्यक्ति गरीब है, जो क्लर्क के पद पर काम कर रहा है। ब्राह्मण अपने बेटे के शव को उस व्यक्ति के पास ले जाता है। उस व्यक्ति को भगवान कहकर पुकारने के बाद वह व्यक्ति उसे 'सर' कहकर पुकारने को कहता है। दोनों में सुख-दुःख, पाप-पुण्य पर बहस होती है। वह दफ्तरी बाबू ब्राह्मण को बताता है कि दिल्ली का पूरा प्रशासन हम चलाते हैं। वह राजनीतिक नेताओं की पोल खोलते हुए कहता है कि अब क्लर्क तंत्र हैं, पर मैं गरीब हूँ। ब्राह्मण को संतोष लगता है कि शासन गरीब के हाथ आने पर गरीबों पर सोचा जाएगा। वह क्लर्क उसे अपने बारे में कहता है- ''मैं त्रेता में राम हूँ, द्वापर में कृष्ण हूँ और आजकल एक क्लर्क हूँ।''[9] अपने अधिकार को क्लर्क सरकारी दफ्तरों में प्रधानमंत्री द्वारा चुने गए व्यक्ति ने अगर क्लर्क की माँग पूरी न कि तो उसे नियुक्ति पत्र न भेजकर उसकी नियुक्ति का सिर्फ दिखावा करके पत्र को फाड़ देता है। परंतु ब्राह्मण रिश्वत से पेट भरना उचित नहीं ऐसा बताकर उसे फटकारता है। इस पर क्लर्क कहता है- ''रिश्वत! हाँ, रिश्वत लेता हूँ। पर रिश्वत तो शराब है, जिससे प्यास बढ़ती है। तृप्ति उससे कभी नहीं होती।''[10] इस प्रकार नाटककार ने यहाँ पर राजनीति में बढ़नेवाली रिश्वतखोरी पर व्यंग्य करके क्लर्क रूपी शासक के शोषण का बीभत्स रूप स्पष्ट किया है। आज प्रशासन में बढ़नेवाली लालफिताशाही पर भी यहाँ कठोर व्यंग्य किया है।

ब्राह्मण बेटे के शव के पास उदास होकर, आँखों में पानी लाकर खड़ा है। ब्राह्मण दफ्तरी बाबू के सामने अपने बेटे की बारह वर्ष की अल्पायु में होनेवाली मृत्यु पर चिंता प्रकट करता है, तब दफ्तरी बाबू उसे कहते हैं- ''आजकल हमारे देश में जिन लोगों में लाज-शर्म जैसी चीज है, वे लोग या तो देश छोड़ जाते हैं, या संसार छोड़ जाते हैं।''[11] क्लर्क द्वारा ब्राह्मण को तुम दशरथ नहीं हो, जो पुत्र वियोग में प्राण त्याग दोगे। आजकल तो लोग कुर्सी के वियोग में प्राण त्यागते हैं। क्लर्क और ब्राह्मण के बीच की चर्चा में रूपाकात्मक्ता के आधार पर दशरथ और विश्वामित्र के मिथक को आधुनिकता में ढालने का प्रभावी काम किया है। ब्राह्मण समाचार पत्रवालों पर व्यंग्य

करता है कि वह अपने मन की छापते हैं। वह दशरथ को चतुर राजनीतिज्ञ और विश्वामित्र को बुद्धिवादी मानता है। जब विश्वामित्र के साथ राम-लक्ष्मण को भेजने की चर्चा हो रही हो तब ब्राह्मण के मतानुसार विश्वामित्र दशरथ से कहता होगा- ''रहने दे, दशरथ ! तू किसी काम का नहीं। तू केवल मीठी बातें करता है। वोट ले सकता है और नारे दे सकता है। कर्म तेरे वश का नहीं है। तू कोई नारा दे, 'आराम हराम है', 'जय जवान, जय किसान', 'गरीबी हटाओ'।''[12] आदि से राक्षसों से लड़ने की जगह सभा का उद्घाटन करता रहता है। दशरथ को विश्वामित्र और एक सलाह देता है कि ''दशरथ ! तू राक्षसों को मार देगा, तो अगले चुनाव में तुझे वोट कौन देगा ? तेरे चुनाव-फंड में धन कहाँ से आएगा।''[13] भ्रष्ट चुनावी राजनीति पर यहाँ कठोर व्यंग्य किया है। विश्वामित्र जैसे बुद्धिवादी लोग आज राजनीति के सारे भेद जानते हैं, परंतु खुद भ्रष्ट नीति का उन्मूलन करने की अपेक्षा दूसरों को उन्मूलन करने की सलाह देते हैं। विश्वामित्र जैसे बुद्धिवादी लोग ताड़का रूपी राजनीतिक भ्रष्टाचार को मिटाने की सलाह राम-लक्ष्मण को देते समय कहते हैं - ''राम ! इसे मारो। वह राजनीतिक भ्रष्टाचार है। ताड़का इसका उपनाम है। इसकी एप्रोच बड़ी ऊँची है। यह रावण के मामा मारीच की माँ अर्थात् निक्सन की नानी है। इसके पास न धन की कमी है, न शक्ति की, न संरक्षण की। यह गरीब, पिछड़े हुए एवं दुर्बल देशों को तंग करनेवाली अमेरिका की सेना, सॉरी, रावण की सेना है।''[14] नाटककार ने राजनीति में पनपनेवाली विदेशी दुष्टनीति पर भी व्यंग्य किया है। आधुनिक नेताओं की चतुराई को देश के माध्यम से स्पष्ट किया है।

राम ने ताड़का रूपी भ्रष्टाचार को मारने के बाद विश्वामित्र मारीच और सुबाहु को भी मारने को कहता है, ताकि देश में फैले गुंड़ागर्दी, काले व्यापार से मरनेवाले देशवासियों की संख्या कम हो जाएगी। इस प्रकार नाटककार ने यहाँ पर युगों-युगों से बुद्धिवादी लोग केवल उपदेश देते आए हैं, इसीसे राजनीति में राशन का कोटा काला बाजार में हड़प किया जाता है, गरीब लोग भूखे मरते हैं, सहकारिता के आंदोलन के सहारे कृषकों का माल खरीदकर उनका शोषण किया जाता है। सहकारी आंदोलन की असफलता पर नाटककार ने यहाँ व्यंग्य किया है। कोटेशनों के माध्यम से होनेवाली लूट पर चिंतन किया है। अकाल पीड़ित इलाके में राहत कार्य की त्रुटी पर व्यंग्य करते हुए क्लर्क राजनीतिक नेताओं की पोल खोलता है। अकालग्रस्त इलाके में होनेवाली मृत्यु को राजनीतिक नेताओं द्वारा नजरअंदाज किया जाता है। देश अथवा शासन को उससे कोई

लेना-देना नहीं। ब्राह्मण और क्लर्क में पुण्य, भाषा, भाषा-विज्ञान, पीएच्. डी. जैसे विषयों पर चर्चा शुरू होती है। क्लर्क ब्राह्मण की भाषा संबंधि बातचित को सुनकर उसे सूचित करता है कि भाषा से रोटी अधिक महत्त्वपूर्ण है। ब्राह्मण अपनी भाषा का महत्त्व विशद करते हुए कहता है कि ''जिनके पास अपनी भाषा नहीं होती, उनकी रोटी भी उनके पास नहीं रहती।''[15] इस प्रकार भाषा और रोटी पर व्यंग्य किया है।

ब्राह्मण और क्लर्क के बीच की बातचित के दौरान क्लर्क तंग होकर बीड़ी पीने का प्रयत्न करता है, परंतु ब्राह्मण द्वारा क्लर्क को कार्यालय में बीड़ी पीना अनुचित बताया जाता है। ब्राह्मण देश के नेताओं को अपनी भाषा और रोटी का संबंध पता न चलने के कारण चिंता प्रकट करता है, इस पर क्लर्क की टिप्पणी देखिए- ''नेता लोग भी रोटी और भाषा का संबंध जानते हैं। वे जानते हैं कि जनता की रोटी, जनता की भाषा से जुड़ी है। जनता की भाषा आयी, तो जनता को तो अपनी रोटी मिल जाएगी, पर नेताओं की अपनी रोटी छिन जाएगी।''[16] इसलिए नेता संस्कृत से डरकर संस्कृतिविहीन भाषा चाहते हैं जिसमें सिर्फ खोखले टिन के टब्बे की तरह केवल शब्द हो न विचार, सिद्धांत, ज्ञान होना चाहिए, क्योंकि जनता को अगर उनकी भाषा आए तो वह उन्हें सत्ता से निकाल देगी। क्लर्क द्वारा भारतीय नेताओं पर की गई आलोचना युगबोध की कठोरता को साकार करती है।

क्लर्क ब्राह्मण को यह सूचित करता है कि इस पर विदेश में जाकर संशोधन करो। यह क्लर्क आगे चलकर देश के बुद्धिजीवी, हिंदी फिल्में, देश की भलाई की बातें ब्राह्मण के पास व्यंग्य-वक्रोक्ति शैली में बताते हुए अपनी बीड़ी फेंकता है, जिससे टाट जलता तो वह आपत्तिजन चीज महसूस होती है। क्लर्क इसमें भी अपना विशेष उद्देश बताते हुए कहता है- ''यदि पुराना टाट जलेगा नहीं तो नया कैसे खरीदा जाएगा ? नया खरीदा नहीं जाएगा तो टाट का कारखाना बंद हो जाएगा और वहाँ काम करनेवाले लोग बेकार हो जाएँगे। मैंने पुराना टाट नहीं जलाया है, अनेक लोगों को नौकरी का एक्सटेंशन-लेटर दिया है।''[17] ब्राह्मण उसे गंदगी फैलाने का कारण पूछने पर क्लर्क कहता है- ''यह भी सफाई कर्मचारी की नौकरी बनाए रखने के लिए''[18] ब्राह्मण क्लर्क के विचारों को सुनकर उसे नीच और तर्क एवं ज्ञान का दुरुपयोग करनेवाला जंतु मानता है। इस पर क्लर्क ब्राह्मण को डॉक्टर के बारे में जानकारी नहीं है देखकर क्लर्क डॉक्टरों के दो भेद बताता है।

एक विश्वविद्यालयों में पीएच्. डी. प्राप्त करनेवाले और दूसरे पाँच वर्षों तक मेडिकल कॉलेज में अध्ययन करने के उपरांत भी रोग का निदान न कर पानेवाले डॉक्टर। ब्राह्मण डॉक्टरों के इन भेदों को नहीं जानता है। कारण वह त्रेता युग का आदमी है। ब्राह्मण और क्लर्क में ब्राह्मण के बेटे की मृत्यु का कारण क्या हो सकता है, इस पर चर्चा शुरू होती है। क्लर्क उसे नॅचरल डेथ मानता है तो ब्राह्मण इस मृत्यु को 'शासन का पाप' मानता है। ब्राह्मण शासन की बेईमानी ही अपने अकालपीड़ित बेटे के मृत्यु का कारण मानता है। ब्राह्मण के मतानुसार इस शासन में व्यक्ति को आवश्यक खाने को नहीं मिलता, जिसके कारण कीटाणू घर करते हैं और लोगों की मृत्यु होती है। सरकार ही इसके लिए जिम्मेदार है। क्लर्क इसे झूठ मानकर उसकी धारना के अनुमान से मनुष्य अपने पिछले जन्मों के कर्मों के कारण, दुर्भाग्य के कारण मरता है। ब्राह्मण बाढ़ किसके अपराध से आती है, यह पूछता तो क्लर्क नदियाँ क्षमता से ज्यादा पानी पिती है। यह प्रकृति है उसकी नैसर्गिकता को कृत्रिम चीजें अच्छी नहीं लगती। इसी बातों को सुनकर ब्राह्मण क्लर्क पर आरोप करता है कि उसमें श्रोता को वाणी के द्वारा बहकाने की क्षमता है। पर क्लर्क का मानना है बाढ़, सूखा, महामारी, अकाल में मरनेवाले अपनी मूर्खता से मरते हैं। ब्राह्मण द्वारा क्लर्क को यह संपूर्ण भारत की विशिष्टता है, ऐसा बताना कि सूखापन हमारी राष्ट्रीय विशेषता है, इसलिए शासन सूखापन न जाने के लिए सोचता जिससे नौकरशाही का फैलाव सर्वत्र करके लोगों को मूर्ख बनाया जाता है। यहाँ पर नाटककार ने सरकारी व्यवस्था की अनारकीपूर्ण एवं मूर्खतापूर्ण वृत्ति को स्पष्ट किया है।

ब्राह्मण देश में बढ़ती हुई महँगाई के कारण अपनी अगली पीढ़ियों का जीवन पराश्रित किया जा रहा है, इस पर क्लर्क के साथ बहस करता है। क्लर्क इसका शास्त्रीय विश्लेषण बताकर इसे अविकसित देश की उन्नति मानता है। लोग अपनी क्षमता से ज्यादा खर्च करके महँगाई बढ़ाते हैं। क्लर्क के मतानुसार "जिस देश में महँगाई नहीं बढ़ रही, वहाँ विकास नहीं हो रहा है। यदि हम लोगों में राष्ट्रीयता, देशप्रेम है, तो हमें अपने देश के विकास में सहयोग देना चाहिए और उसका एक ही रास्ता है- देश में महँगाई को अधिक-से-अधिक बढ़ाया जाए। यह महँगाई बढ़ानेवाले व्यापारी ही देशभक्त हैं जिन्हें 'भारत रत्न' की उपाधि देनी चाहिए।"[19] यहाँ पर महँगाई जैसी महाभयंकर बीमारी को शासक वर्ग बढ़ावा देता है और उसे फैलानेवालों का सम्मान

करके जनता का शोषण करता है। ब्राह्मण क्लर्क को शिक्षा व्यवस्था के द्वारा जनता को विद्या और ज्ञान के सहारे झूठ बोलकर बहकाने का काम किया जाता है। इस पर क्लर्क अपना मत ब्राह्मण को बताते समय "हमने विश्वविद्यालय इसलिए खोले हैं कि जनता उनके भ्रमजाल में अटकी, मुक्त होने के लिए छटपटाती रहे। युवा पीढ़ी तीन या पाँच वर्ष उन दीवारों के साथ टक्करें मारती रहे।"[20] क्लर्क के विचारों से शिक्षा व्यवस्था की दुर्गती पर प्रकाश पड़ता है। आज के युग में शिक्षा व्यवस्था भी भ्रष्टाचार के चंगुल से अपने को बचा न सकी है।

ब्राह्मण और क्लर्क के बातों के दौरान ब्राह्मण ऊबकर क्लर्क को अपने बेटे की मृत्यु हो गई है, इस पर ध्यान आकर्षित करता है। क्लर्क दफ्तर के सभी चपरासी चाय पीने गए हैं और आजकल खुद नियमानुसार किसी को बुलाने का काम नहीं कर सकता। ब्राह्मण सरकारी नौकरों को पात्र मानता है। ब्राह्मण खुद क्रांतिबाबू को बुलाने जानेवाला है, तभी स्वयं क्रांतिबाबू वहाँ पर उपस्थित होते हैं। क्लर्क क्रांतिबाबू की पहचान कर देता है- "ये क्रांतिबाबू पुराने क्रांतिकारी हैं। अंग्रेजों के समय प्रेम विवाह करके सामाजिक क्रांति की थी, निजी उद्योग चलाकर आर्थिक क्रांति की थी और वायसराय की गाड़ी पर बम फैक कर राजनीतिक क्रांति की थी।"[21] ब्राह्मण यह सुनकर क्रांतिबाबू को रामायण का परशुराम कहता है। ब्राह्मण रामायण के परशुराम ने भी सदा क्रांति ही की है। इसलिए राम उन्हें- "परशुराम! तुमने राक्षसों के अत्याचार को कभी न पहचाना और भारतीय क्रांतिकारियों ने काँग्रेस के अत्याचार को।"[22] नाटककार ने स्वातंत्र्योत्तर काल में काँग्रेस सरकार के शासकों द्वारा भारतीय जनता पर होनेवाले अत्याचारों पर व्यंग्य किया है। इसके संदर्भ में क्रांतिबाबू ब्राह्मण को एक और उदाहरण देते हुए कहता है- "राम, यह ताड़का वन है। पहले यहाँ मलद और करूश नाम के दो राज्य थे। उन्हें रावण की प्रतिनिधि ताड़का वैसे ही हजम कर गई, जैसे तिब्बत को चीन हजम कर गया। दशरथ और जनक दोनों सम्राट खड़े तालियाँ बजाते रहे, जैसे जवाहरलाल ने बजाई। अपनी सीमा पर के राज्यों की रक्षा का महत्त्व इन तीनों में से किसी ने नहीं समझा।"[23] नरेंद्र कोहली के मन में राजकीय शासक के प्रति जो घृणा के भात्र हैं, वह यहाँ स्पष्ट होते हैं।

ब्राह्मण क्रांतिबाबू का ध्यान अपनी ओर खिंचकर उन्हें शम्बूक का वध करने को कहता है क्रांतिबाबू उसे कलियुग के भिक्षुक कहता तो क्लर्क ब्राह्मण से तुम सांप्रदायिक दंगे

फैलाकर क्रांति करने का काम कर रहे हो। क्रांतिबाबू शम्बूक एक तपस्वी है, जो तपस्या कर भ्रष्टाचार को दूर करना चाहता है और उसे छूत की बीमारी है, उसे फैलाने का काम कर रहा है। क्रांतिबाबू शम्बूक को रामलुभाया जो इन्स्पेक्टर होकर रिश्वत का विरोध करता तो उसके सिपाही, हवलदार उससे छिपकर रिश्वत लेते हैं। वे लोग भी रामलुभाया को मारना चाहते थे। इस पर ब्राह्मण सिर्फ अपने बेटे की मृत्यु शासन के पाप से हुई है इससे मतलब रखना चाहता है। ब्राह्मण-क्रांतिबाबू की चर्चा के दौरान सब-इन्स्पेक्टर वहाँ पर आकर कहता है कि उसे सूचना मिली है कि किसी व्यक्ति की हत्या होकर उसका शव यहाँ छिपाया है। इस समय वह प्रश्नों के द्वारा सबको परेशान करते हुए हर समय गालियाँ देता रहता है। जैसे- ''अबे माँ के यारो! हमने एक चपरासी को बुलाया था, यह सारा गंदा नाला कहाँ से आ गया? अबे, ये चपरासी हैं सालो। कोठेवालियाँ नहीं, जिनका हरम बनाकर मैं नवाब बन जाऊँगा।''[24] पुलिस इन्स्पेक्टर हत्या की कारण मीमांसा पूछता है तब क्लर्क उन्हें कहता है कि इसकी मृत्यु अकाल से हुई है। यह प्राकृतिक मृत्यु है, उसके लिए कोई दोषी नहीं है। चपरासी अपने सोच के अनुरूप कारण बताते हैं कि महँगाई, पुलिस की अत्याचारी गोली, सरकारी शासकों के झगड़े, मिलावटी भोजन, कॉलेज में यूनियन का चुनाव आदि के झमेले में आकर हत्या का शिकार बना होगा। पुलिस का बर्ताव घृणास्पद होता है। चपरासियों के द्वारा हत्या के कारणों को सुनकर सब-इन्स्पेक्टर क्रांतिबाबू को कारण पूछता तो वह चोरी, बेईमानी, भ्रष्टाचार, भूख, गरीबी, हत्याएँ, अंधविश्वास, हताशा, तस्करी, काला बाजार, आलस्य, हरामखोरी कारण मानते हैं। यह सब बातें सुनकर सब-इन्स्पेक्टर थका हुआ बड़ी लंबी छान-बीन करने को कहता है। जिससे नाटक में पुलिस के निक्कमेपन पर प्रकाश डाला है। ब्राह्मण सब-इन्स्पेक्टर से कहता है- ''मुझे लगता है कि इस देश की परिस्थितियाँ देखकर, इसके दिल को बहुत बड़ा धक्का लगा है, और यह लज्जा और ग्लानि के सम्मिलित प्रभाव से मर गया है।''[25] सब-इन्स्पेक्टर यह धक्का बस, ट्रेन का होगा जिससे उसकी सड़क दुर्घटना से हत्या हुई होगी मानकर ब्राह्मण को लाश उठाने को कहता है। ब्राह्मण इस धक्के को सूक्ष्म, विशेष धक्का मानता है, जो एक शरीफ आदमी बिना रिश्वत देते पुलिस से छूट जाने पर पुलिसवाले को लगता है। नाटककार ने विभिन्न प्रसंगों के द्वारा पुलिस की हरकतों का व्यापक रूप में चित्रण स्पष्ट करके पुलिस की आतंकवादी प्रवृत्ति का बीभत्स चित्रण स्पष्ट किया है।

आलोचकों की दृष्टि में 'शम्बूक की हत्या' काफी हद तक सफल नाटक है। डॉ. राम जन्म शर्मा- " शम्बूक की हत्या' में पुराणकालीन शम्बूक की हत्या को आधुनिक संदर्भ से रेखांकित करने का प्रयास किया है। नाटक में शिक्षा, अर्थव्यवस्था, राजनीति के साथ ही समाज में व्याप्त अत्याचार का व्यंग्यात्मक रूप से आकलन प्रस्तुत किया गया है। वर्तमान के सत्य को रूपायित करने में नाटक सक्षम है।"[26] डॉ. रमेश गौतम- "शम्बूक की हत्या में शम्बूक की कथा कहना नाटककार का उद्‌देश्य नहीं, अपितु नाटक में यह प्रसंग सूक्ष्म रूप में आकर शासन और वर्तमान युग की विसंगतियों को उजागर करता है।"[27] नरनारायण राय का दृष्टिकोण है- "शम्बूक की हत्या एक उल्लेखनीय कृति है। ....यहाँ पौराणिक कथा के चरित्र इस युग में आकर दोनों युगों की समस्याओं को उजागर करता है। ....अपनी प्रकृति में यह बड़ा ही गंभीर व्यंग्य नाटक है और नाटककार यह जानता भी है कि वह एक बड़े ही तेज औजार का उपयोग कर रहा है....।"[28] डॉ. दशरथ ओझाजी शम्बूक की हत्या के प्रसंग को लेकर कहते हैं- "कालिदास ने राम के विरूद्‌ध युवा पीढ़ी की प्रजा का विद्रोह शम्बूक वध के प्रसंग में दिखाया है। आधुनिक नाटककारों ने इस प्रसंग के आधार पर राम को शुद्र विरोधी अत्याचारी शासक की उपाधि दे डाली थी। लेकिन 'शम्बूक की हत्या' में कोहली कहीं भी राम को शुद्र विरोधी दुराचारी सिद्‌ध नहीं करते। उनका लक्ष्य भी नहीं है। प्रजातंत्र में शुद्र से भी निम्न प्रस्तर पर रहनेवाली दलित, पीड़ित, शोषित, भूखी गरीब जनता के आक्रोश को उभारते हुए शासन और शासन के अहाते में ऐशो-आराम की जिंदगी जीनेवाले राजनीतिक नेता और उनके एजेंट रूपी 'सवर्ण लोगों' को शुद्र विरोध सिद्‌ध करने का प्रयास ही कोहली ने किया है। इससे मिथकीय पात्रों पर कोई लांछन नहीं आया है।"[29] इस तरह 'शम्बूक की हत्या' मिथक के परिप्रेक्ष्य में मौजूदा व्यवस्था की निर्मम आलोचना है।

'शम्बूक की हत्या' नाटक में नरेंद्र कोहली ने मिथकीय शैली का प्रयोग करके शासन के पाप के कारण ब्राह्मण उसका प्रायश्चित करने की माँग करता है, ब्राह्मण याने जनता। आधुनिक युग में सरकार शम्बूक की हत्या क्यों और कैसे कर सकती, क्योंकि शम्बूक के कारण देश के भविष्य की हत्या करनी होगी। आधुनिक युग में शम्बूक सारे अत्याचार, शोषण, दगेबाजी, झूठ, मक्कारी, चोर-बाजारी, मिलावट घूस, रिश्वतखोरी का प्रतीक है, जिसे संरक्षण और पोषण सरकार से मिलता है। शासन प्रजा की अकाल मृत्यु को टालने का प्रयास करने का ढोंग करके

लोगों को बहकाकर शोषण के सारे तत्व आक्रमक ढंग से प्रयुक्त करती हैं। ऐसी विकट परिस्थिति के दबाव के धक्के से बच सकना किसी के लिए संभव नहीं है।

संक्षेप में नाटककार ने 1973 ई. का भारत और प्रधान मंत्री शब्द का प्रयोग स्त्रीलिंग में करके नाटककार जिस राजनीतिक परिस्थिति पर व्यंग्य करना चाहते हैं उसका स्पष्ट संकेत देते हैं। 'शम्बूक की हत्या' नाटक में बीच-बीच में मिथक के प्रसंगों के दृश्य उभरते रहने के कारण नाटकीयता, कलात्मक चमत्कार, रोचकता, आकर्षण नाटक में बना रहता है। पुराण के परिवेश में नाटककार ने आपतकालीन परिस्थिति, स्वतंत्र भारत की दुःखपूर्ण स्थिति जैसे गहन विषय को बहुत गहराई से स्पष्ट और सहजता से पौराणिक कथा के संदर्भों को लेकर प्रस्तुत किया है।

2.2 हत्यारे -

'हत्यारे' नरेंद्र कोहली की नाट्यकृति 1983 में सर्व प्रथम प्रकाशित हुई है। नाटककार ने आधुनिक युग में जनसंख्या की बढ़ती समस्या को इस नाटक में प्रस्तुत किया है। अधिक संतानवाले माता-पिता द्वारा निभाई जानेवाली जिम्मेदारियों में बेदखली कैसे ली जाती है, इस पर प्रकाश डाला है। ऐसी पारिवारिक स्थिति में पलनेवाले रमेश जैसे नवयुवकों का विनाश किस तरह होता है। इस व्यंग्य को नाटककार ने स्पष्ट करने का प्रयत्न किया है।

नाटककार नरेंद्र कोहली ने मनोविश्लेषणात्मक शैली द्वारा समाज, परिवार, परिस्थिति, आर्थिक स्थिति आदि के कारण मनुष्य दुर्गति की खाई में कैसे धस जाता है आदि को रमेश की हत्या की कथा द्वारा उजागर किया है। मनोविश्लेषणात्मक शैली द्वारा मध्यवर्गीय परिवार का सबसे छोटा बेटा परिवार से मिले बर्ताव से तंग आकर, टूटकर दूसरे शहर में स्थानापन्न होता है। शहर के प्राइवेट कंपनी में होने का बहाना और झूठा प्रचार करके वहाँ पर गलत लोगों के कुचक्र में फँस जाता है। अपने आप असामाजिक गंदगी में धसता है। वहाँ पर तश्करों के सान्निध्य में आकर पैसों के लालच में तश्करी माल के बटवारे के छल-छदम में उसकी हत्या होती है। नाटककार ने यहाँ आधुनिक युग में बच्चों को परिवार से अच्छे संस्कार, सीख, सुरक्षा, प्रेम अगर न मिले तो बाहरी आकर्षण के प्रभावों से बच्चे अपने जीवन को गलत राह पर लेकर जाते हैं, जहाँ से वापस लौटने का रास्ता नहीं होता और वह मौत की खाई में गिर जाते हैं।

नरेंद्र कोहली आधुनिक युग के नाटककार हैं। उन्होंने 'हत्यारे' नाटक के द्वारा बढ़नेवाली आबादी को वक्त पर न रोका जाए तो समाज में गुंड़ागर्दी, हत्यारे, खून-खराबा, आतंक, अत्याचार, शोषण, सांप्रदायिक दंगों के द्वारा आधुनिक पीढ़ी का जीवन अशांत बन जाएगा। परिवार का सिमित नियोजन होगा तो माँ-बाप को बहुत-सी समस्याओं से छुटकारा मिल सकता है। इस विमुखता को सीधे-साधे ढंग से नाटककार द्वार यथार्थवादी शैली में एक मध्यवर्गीय परिवार का मनोवैज्ञानिक खाका खींचकर प्रस्तुत किया गया है।

कथावस्तु -

इस नाटक का परिवेश एक मध्यवर्गीय परिवार का है। नाटक में बनारसीदास पचहत्तर वर्ष के झक्की वृद्ध है। उन्हें सात बेटे-बेटियाँ हैं, जिनमें से एक रमेश है। रमेश की हत्या के जिम्मेदार वे हैं। यह हत्या वे वर्षों पूर्व कर चुके हैं। अधिक संतानें होने पर वे रमेश पर कोई ध्यान नहीं दे पाए। जहाँ उसके अन्य भाई किसी तरह से अपनी जिंदगियाँ ढंग से जीने लगे और जीवन में प्यार भी उन्होंने पाया, वहीं रमेश एक अनिच्छित संतान की भांति जीवन भर घिसटता ही रहा, जिंदगी में उसके संघर्ष का कहीं ठहराव नहीं रहा। ऐसी स्थिति में उसकी हत्या होती है। नाटककार ने परिवार के वातावरण पर कड़ा व्यंग्य करने का प्रयत्न इस नाटक में व्यंग्य शैली द्वारा किया है।

बनारसीदास के दामाद द्वारा उन्हें ऑपरेशन करने का जिक्र करना, ऑपरेशन के दौरान की चीर-फाड़ से डरकर बनारसीदास द्वारा ऑपरेशन टालना इस पर उनकी पत्नी का उनपर गुस्सा होना और ऑपरेशन की आवश्यकता को समझाते हुए अनिल कहता है- ''माँ-बाप बच्चों को बचपन में पालते हैं, उनके जीवन पर उनका अधिकार रहता है। उसी तरह बूढ़ापे में बच्चे माँ-बाप को पालते हैं, सेवा करते हैं।''[30] उनकी पत्नी को गर्व है कि उनके बच्चे औरों की तरह एहसान फरामोश नहीं हैं। बनारसीदास अधिक संतान इसलिए लाभदायक मानते हैं कि एक से धोखे की सूचना मिलने पर दूसरे के पास जा सके। इसी दौरान एक पत्र मिलता है- ''रमेश सीरियस! कम इमीडिएटली''[31] इस पत्र पर सभी में चर्चा होती है। अनिल बंबई में अपने ऑफिस के दोस्तों को फोन करके अस्पताल से पूरी जानकारी करके खबर सच है या झूठ बताएँ। उसी समय बनारसीदास स्वभाव से विचित्र आदमी होने के कारण विभिन्न तर्क लगाते हैं, जिन्हें सुनकर

उनकी पत्नी शांतिजी की तबीयत खराब होती है। खबर को सुनकर वह स्वयं भी परेशान होते हैं। बनारसीदास और शांति में बहस के दौरान शालिनी दोनों को शांत करती है। अनिल फोन की राह में चिंताक्रांत है। बनारसीदास बगैरसरकारी नौकरों को मिलनेवाले सुविधा पर अपना अभिप्राय व्यक्त करते हुए कहता है- ''तुम लोगों को यह अच्छी सुविधा है प्राइवेट कंपनियों में। सरकारी नौकरों में ऐसे समय में कोई किसको पूछे ! कहाँ से पता करे ?''[32] अनिल भी उनके विचारों से सहमत होकर उन्हें तबीयत संभालने के लिए थोड़ी ब्रांडी लेने को कहता है। शालिनी इस वक्त उर्मिला का किस्सा बताती है कि उसने अमेरिका से बड़ी पाईप लाई, लेकिन पाप ने अपना खर्चा कम करने के लिए तंबाकू पिना छोड़ा है। बनारसीदास शालिनी की बातों का मतलब जानकर दामाद की खुशी के लिए ले रहा हूँ कहते हैं। इस पर शांति दामाद की खुशी के लिए ऑपरेशन भी करवाएँ कहती है।

इसी बात-चीत के दौरान बंबई से फोन आता है और रमेश के अस्पताल में होने की खबर सच निकलती है। उसकी हालत गंभीर है, उसे कई बोतले खून चढ़ चुका है। वह अब खतरे से बाहर है। यह पुलिस केस है। रमेश के पेट, पीठ और छाती में चाकू के घाव लगे हैं। अनिल की बातों को सुनकर सब चिंतित होते हैं। अनिल सबको समझाते हुए- ''कोशिश करते हैं। आप लोग घबराइए नहीं। उसके बच जाने की पूरी आशा है। एक बार संकट निकल गया, तो फिर पूरी तरह से स्वस्थ हो जाएगा।''[33] नाटककार ने अनिल दामाद होकर भी अच्छे संस्कारों के कारण पत्नी के माँ-बाप की सेवा अपने माँ-बाप के रूप में करता है। यह स्पष्ट करके जीवन में प्रेम के महत्त्व को उजागर किया है।

अनिल जब बंबई जाता है तो उसके पड़ोसी स्त्री 1, 2 और पुरुष 1, 2 पड़ोसियों के फर्ज को निभाते हुए आते हैं और औपचारिक प्रश्न भी पूछते हैं। बनारसीदास ने सबको पत्र से खबर दी। शालिनी उनके सामने बंबई में घटी घटनाक्रम का चित्र खींचकर रमेश के पराक्रम पर गर्व महसूस करती है कि उसने जिम्मेदारी के लिए, पड़ोसियों के लिए अपनी जान पर खेला है। सब में बंबई में बढ़नेवाली गुंड़ागर्दी, असुरक्षा के वातावरण पर चर्चा होती है। पड़ोसी रमेश की हिम्मत की प्रशंसा करते उसे शहीद का दर्जा देते हैं, लेकिन इनमें से कोई नहीं चाहता की उनके बेटे सन्यासी बने, वह महत्मा बुद्ध की पूजा करते हैं, पर वे महान लोगों से डरते हैं कि वह भावना को जागृत

करते पर परिणाम तो अपने घर को भुगतना पड़ता है। शांति भी उनसे सहमती दर्शाते हुए कहती है- ''मैं भी यही कहती हूँ। अपने लिए ही नहीं, दूसरों के लिए भी कहती हूँ। हे भगवान ! तू किसी से उसकी संतान ऐसे मत छीन। जब संतान दी ही है, तो उसकी रक्षा कर।''[34] पड़ोसी रमेश के निहत्था उनसे लड़ने की बात को आत्महत्या ही मानते हैं। पुलिस ने उन लोगों को पकड़ लिया। बनारसीदास पुलिस का एक उदाहरण देकर देश की पुलिस की कर्तव्य परक्ता को स्पष्ट करते हैं। शालिनी भी चिंता व्यक्त करती- ''घरों में हत्याएँ, सड़कों पर हत्याएँ, गाड़ियों में हत्याएँ.... यह देश किधर जा रहा है ?''[35] शालिनी के इन्हीं विचारों को सुनकर पड़ोसी अपना इरादा बताते हैं कि रमेश के नाम पर एक संस्था बनाकर रमेश जैसे शहीदों को गौरवान्वित करें। बनारसीदास और शांति में किसी को खबर करें इसी पर बहस होती है। नाटककार ने इस प्रसंग से समाज में अन्याय का फैलाव सबको बूरा लगता है, लेकिन स्वयं इसको नष्ट करने की बात पर हर एक अपना शरीर बचाता है। शहीदों का गौरव कर सकते हैं पर उनके विचारों पर कोई नहीं चलता। इस व्यंग्य का चित्र यहाँ खिंचा है।

रात के दस बजे अनिल बंबई से वापस आता है। अनिल घर में बनारसीदास और शांति के सोने का अंदाज लेता है। बाद में अनिल शालिनी को बंबई की सारी बातें बताना शुरू करता है कि रमेश का मित्र खन्ना रमेश को अस्पताल ले गया और हमें खबर भेजी। शालिनी बीच में ही बोलती है कि ''मैं तो कई बार यह सोचती हूँ कि संयोग ही था कि वह रमेश के साथ था, नहीं तो रमेश का वहीं कहीं देहांत हो जाता और हमें पता तक न चलता। पुलिस हमें खोज ही न पाती, या खोजती ही नहीं। लावारिस लाश की अंत्योष्टि कर दी जाती और रमेश सदा को हमारे लिए एक पहेली बना रहता....।''[36] शालिनी के विश्वास को देखकर अनिल उसे बहुत से प्रश्न पूछता है।

अनिल शालिनी को रमेश संबंधि जानकारी देता है कि रमेश एक खंड़हरनुमा मकान में रहता था और वह कंपनी में काम नहीं करता था। वह एक पेशेवार तश्करी माल का व्यापारी था। खन्ना ने उसकी हत्या की है, उसी दौरान बनारसीदास नींद न आने के कारण बाहर आते हैं और दोनों को सोने को कहते हैं। जब अनिल उन्हें कम सोचो कहता है तो बनारसीदास- ''सोचता हूँ.... हमारे घरों में अपने बच्चों को बड़े गलत संस्कार दिए जाते हैं, झूठी शिक्षा दी जाती है....''[37] शालिनी उन्हें समझाती है कि आपकी चिंता से रमेश वापस लौटेगा नहीं। आप पहले सोचते थे

उसी प्रकार सड़क-दुर्घटना मानकर भूलने की सलाह देती हैं। अनिल बनारसीदास को गोली खाकर सोने को भेजता है और बात को आगे बढ़ाता है कि रमेश द्वारा उसी रात शराब पिने के कारण नशा में उसे हत्यारों के चाकू दिखाई नहीं दिए। इससे शालिनी चिंतित होती है, क्योंकि उसे पहले से पापा की चिंता है उस पर सोचती है। अनिल शालिनी को दिलासा देता है कि ऐसी उम्र में मनुष्य बहुत से झमेले सहकर समर्थ हो जाता है। वह खन्ना को खुनी मानता है और इसका कारण चोरी-तस्करी का माल मानता है। शालिनी उसे पुलिस, समाचार पत्र वालों के पास जाकर आपने आवाज क्यों नहीं उठाई ऐसा कहती है इस पर अनिल आवाज या शोर करने पर वे लोग मेरी भी हत्या करके लाश को गटर में फेंकते, रमेश का दोस्त था इसलिए खबर मिली, मेरी खबर भी न मिलती ऐसा कहता है। शालिनी इस भयावह हादसे के वातावरण को सुनकर भयभीत होती है। नाटककार ने जब व्यक्ति के सामने सच्चाई आती तो वह अपने भ्रमाजाल से बाहर आकर होश में आते हुए दुःख की खाई में गिरता है, यह व्यंग्य वक्रोक्ति शैली द्वारा स्पष्ट किया है।

रमेश की मौत पर अनिल और शालिनी के घर समस्त परिवार का एकत्र होना, भाई-बहनों द्वारा अपने बचपन पर बातचित करना, अधिक संताने होने के कारण सभी का फालतू बनना, पिताजी द्वारा अपनी जिम्मेदारी को समर्थता के साथ न निभाना, उर्मिला-सुरेश के फेल हो जाने पर पिताजी द्वारा उन्हें धमकाना, सुरेश द्वारा अपनी औकात को पहचान कर टैक्सी ड्राइवर का काम करना शुरू कर देना, रमेश का भी आठवीं में फेल होने पर पिताजी द्वारा उसे घर आने से इन्कार करना, परेश द्वारा परीक्षा में नकल करने के लिए पुस्तकें पहुँचाना, परेश का बिना टिकट यात्रा के कारण पकड़ा जाना, पिताजी के डर से अपने घर न लौटकर मौसी के घर जाना ये सारी घटनाएँ पिताजी के कर्तव्य में कसूर की गवाह हैं। पापा के इन व्यवहारों पर सुरेश अपनी टिप्पणी देता है - ''पापा ने बाप बनकर तो कुछ देखा ही नहीं, बस जीवन-भर ट्रैफिक कांस्टेबल के समान हमारा चालान ही करते रहे....''[38] अनिल उनसे ट्रैवेल एजेंट की बात पूछता तो शालिनी बताती है कि उसका धोखाधड़ी का ही काम था कि लोगों के पैसे लेकर जाली पास्पोर्ट बनवा देना, विदेशों में नौकरी का लालच दिखाना। ऐसे आदमी के संगति में वह कैसे अच्छा काम करता। अनिल सबकी बातों को सुनकर दुःखी होकर- ''बड़े परिवार का एक फालतू बच्चा ! पैदा करके डाल दिया हत्यारों के शिकार के लिए।''[39] इस दृश्य में पिता के व्यवहार से बेटों ने अपनी जिंदगी खुद बनाने का बीड़ा

किस प्रकार उठाया यह स्पष्ट करते हैं। साथ ही रमेश जीवन की ओर बढ़ने का प्रयत्न करता रहा और सब लोग उसे मौत की ओर किस प्रकार धकेलते हैं, इसे भी यहाँ पर स्पष्ट किया है।

रमेश को साथ-संग अच्छा नहीं मिला, पिता ने कभी उसे विवेक-सम्मत राय नहीं दी। उसके बड़े भाईयों ने भी उसके साथ बुरा बर्ताव किया जिसके कारण वह धीरे-धीरे परिवार से कटता चला गया और बंबई जा बसा वहाँ उसकी हत्या कर दी गई। रमेश को सुरेश अपने पास रखता है, काम देता है, पर रमेश उसी पैसों से अपने सड़क-छाप, दोस्तों के साथ शराब पिता है। सुरेश ने भी उसके साथ बंधुआ मजदूर की तरह व्यवहार किया कि अखबारों में छपवाकर उसके साथ रिश्ता ही तोड़ा। परेश उसे काम देता है और बाद में हेरा-फेरी करने लगता है तो रमेश को अलग निकालता है। इस प्रकार रमेश परिवारवालों से तंग आकर बंबई चला जाता है। बूरी संगति से हत्या का शिकार बनता है।

अनिल बंबई जाकर रमेश का अंतिम क्रियाकर्म करके आने के बाद परेशान रहने लगता है। वह रमेश के हत्यारों को सजा दिलवाना चाहता है। परिवार के लोगों के साथ इस पर चर्चा करता है, लेकिन सब पुलिस के चक्र में पड़ने से इन्कार करते हैं। सुरेश अनिल को समझाता है कि हमारी पुलिस किसी को खाती नहीं, धीरे-धीरे चूसती है। वह यह नहीं देखती कि अपराध किसने किया है। वह अपराध से उसको क्या मिलेगा यही सोचती है। सुरेश पुलिस के निक्कमेपन और नालायकी प्रवृत्ति का उदाहरण देता है कि एक गाँव में सेठों के दो बेटे मिलकर एक लड़की पर बलात्कार करते और उसकी छोटी बहन का खून भी करते हैं। पुलिस को रिश्वत देकर जेल से छुटते हैं। पुलिस लड़की के पिता को केस वापस लेने को मजबूर करते हुए सेठों के द्‌वारा उसके एकमात्र बेटे की हत्या का डर दिखाकर लड़की को ही कोर्ट में झूठा बयान देने पर मजबूर करती है। सुरेश के किस्से को सुनकर सब इस मामले से दूर रहने की सोचते हैं। अनिल शालिनी पर अपना गुस्सा निकालते हुए रमेश की असली हत्या तो वर्षों पूर्व उसके पिता द्‌वारा हो चुकी थी मानता है। शालिनी के डाँटने पर माफी तो माँगता है, पर वह सुरेश से सहमत नहीं होता। सुरेश उसे वास्तविकता बताता है कि रमेश की हत्या की खोज पर उसके हत्यारे हमें जीवित नहीं छोड़ेंगे। सुरेश इसी दौरान घरवालों को अपने वापस जाने की बात करता है। सुरेश की दृष्टि से उसका यहाँ पर ज्यादा दिन रहना रमेश की यादों को ताजा करना जैसा है। बनरासीदास द्‌वारा रमेश की आत्मा

को शांति मिलने की प्रार्थना की जाती है, ताकि जीते-जी उसने उन्हें सुख नहीं दिया था। बनारसीदास के विचारों को सुनकर उनकी पत्नी शांति उन्हें पत्थर दिलवाले कहकर उपेक्षा करती है। इस पर बनारसीदास कहते हैं- "आदमी बच्चे क्यों माँगता है- अपने सुख के लिए ही तो ? यह कामना तो कोई नहीं करता कि उसके बच्चे बड़े होकर उसका खून पिएँ। ऐसी संतान से तो संतान का न होना ही अच्छा।"[40] इसी दौरान अनिल पुलिस कमिश्नर का पत्र लाता है। जिसमें वैजयंती के नाम का उल्लेख बताने पर बनारसीदास पुलिस के छान-बीन से परेशान होते हैं, तो सुरेश उन्हें इन्स्पेक्टर वेदप्रकाश की तरह निपटने की सलाह देता है। सबके बीच वैजयंती के बारे में चर्चा शुरू होती है। बनारसीदास सबको आदेश देते हैं कि कोई वैजयंती हमें मालूम नहीं और उससे लेना-देना भी नहीं है। अनिल इस पर सबको बताता है कि आप चाहे या न चाहे पर रमेश इस देश का नागरिक था। सरकार इसकी खोज करेगी। अनिल द्वारा पुलिस की कर्तव्य निष्ठा पर विचार प्रस्तुत करने पर शालिनी उसकी उपेक्षा करती है। इस तरह नाटककार ने सरकार, पुलिस की हरकतों के कारण सामान्य जनता उनके ऊपर विश्वास नहीं रखती और उन्हें सहयोग भी नहीं करती।

प्रेम, स्नेह, ममता, विश्वास के लिए भटकते हुए रमेश को वैजयंती का साथ मिला और वे दोनों पति-पत्नी की भांति रहने लगे। रमेश की हत्या के बाद वैजयंती का अपने को बचाते हुए अनिल के घर आना और याचना करके बहू के रूप में स्वीकारने की बनारसीदास को विनंती करना, वैजयंती द्वारा रमेश बच्चे की माँ बनने का कारण बनारसीदास के सामने प्रस्तुत करना, रमेश द्वारा नशा से धुंध होकर हथियारों से बचने के लिए वैजयंती के पास आना, सुबह होने से पहले उसका वहाँ से चल पड़ना, उसके बाद बार-बार आकर वैजयंती के पास रमेश द्वारा अपनी जानकारी बताना, बनारसीदास को वैजयंती पर विश्वास न होना, उसे अपनाने से इन्कार करना, उसे बेइज्जत करने पर वैजयंती का कहना- "मैं वही हूँ, जो रमेश थे। वे आपके अनचाहे बेटे थे, मैं अनचाही बहू हूँ। आपने उन्हें मौत के मुँह में धकेल दिया, मुझे भी धकेल देंगे। उनकी हत्या हो गई, मेरी भी हो जाएगी !"[41] वह विवश और अपमानित होकर वहाँ से चली जाती है। अनिल बनारसीदास को वैजयंती के साथ अच्छे ढंग से पेश आने की बात कहता है, परंतु बनारसीदास उसकी उपेक्षा करते हैं। बनारसीदास की बेटी शालिनी द्वारा गुस्सा प्रकट करने पर वे शालिनी को भ्रम से दूर रहने की बातें करते हैं। नाटककार ने वैजयंती की विवशता को स्पष्ट करके कलियुग के

लोगों के वैजयंती जैसी औरतों की ओर देखने का दृटिकोन स्पष्ट किया है और बनारसीदास के बौने झुग्गी व्यक्तित्व को स्पष्ट किया है।

नाटक का अंतिम दृश्य नाटकीय लगता है। रमेश के मित्र खन्ना का अनिल के घर आना, खन्ना का रमेश की हत्या के दौरान घटना स्थल पर मौजूद होना, उसके द्वारा रमेश की मौत की खबर देना, खन्ना की रमेश के घरवालों द्वारा अच्छी खातिर करना, परंतु खन्ना का भी रमेश की हत्या के षड़यंत्र में सहभागी होना, खन्ना द्वारा वैजयंती के बारे में सूचना देना, वैजयंती को वेश्या ठहराकर रमेश का उसके जाल में फंस जाने की घटना को खन्ना द्वारा रमेश के घरवालों को बताना, रमेश की हत्यारे के बाद वैजयंती द्वारा दस लाख का सोना लेकर भागने की कथा का बयान खन्ना द्वारा वैजयंती की खोज करने की घटना का विवरण खन्ना द्वारा रमेश के परिवारवालों को देना, वैजयंती को शरण देने पर परिवारवालों की वही दुर्गति होगी, जो रमेश की हूई थी, इस पर खन्ना द्वारा प्रकाश डालना, खन्ना के जाने के बाद रमेश के घरवालों का स्तब्ध होना, दस लाख के सोने की लालच में वैजयंती को बहू के रूप में स्वीकार करने की ललक बनारसीदास के मन में पैदा होना, बनारसीदास की पत्नी शांति का इस बात को विरोध करते हुए कहना- ''तो फिर उस रांड का मेरी छाती पर मूँग दलने के लिए खोजना चाहते हैं क्या ?''[42] बनारसीदास के भीतर के हत्यारे का उत्तर कोह्ली ने इन शब्दों में देते हुए कहते हैं- ''सड़क पर किसी के चाकू से मरकट लावारिस लाश के रूप जलना समान जनक है या किसी भले घर में बहू के रूप में मरकर भले लोगों के कंधे पर शमशान घाट जाना....''[43] शालिनी के आश्चर्य को अधिक विस्फाटित करते हुए सुरेश कहता है- ''जीवन से तंग आकर कई घरों में विधवा बहुएँ मिट्टी का तेल छिड़क कर आत्महत्या कर ही लेती हैं....''[44] बनारसीदास शांति को चिंता न करने की सलाह देता है। नाटककार ने यहाँ पर बनारसीदास की लालची प्रवृत्ति पर व्यंग्य किया है।

नरेंद्र कोहली के इस नाटक पर हरीश नवल कहते हैं- ''नाटकीय संवादों की संरचना में नरेंद्र कोहली का नाटककार बेजोड़ है। उनके अन्य नाटकों की भांति इस नाटक में भी उनका संवाद-लेखक पर्याप्त प्रभाव छोड़ता है। बनारसीदास का झक्की चरित्र नाटक के आरंभ में ही उसके ऑपरेशन संबंधी संवादों से प्रकट हो जाता है। अधिक संतान के कारण वह गैरजिम्मेदार रहा और रमेश की मानसिक हत्या पहले से ही उसने की है, पर मानता नहीं है, उसका झक्की

दिमाग इर की कौड़ी लाने में जुट जाता है। जीवित शरीर की चीर-फाड़ करने पर उतारू कर सकती है। यह सब एक सीधे-सादे ढंग से एक ही रंगमंच और दृश्य बंध पर स्पष्ट किया है।''[45]

संक्षेप में नाटककार नरेंद्र कोहली ने 'हत्यारे' नाटक द्वारा मध्यवर्गीय परिवार में अधिक संताने होने पर और कमानेवाला एक होने पर परिवार के सभी सदस्यों को अपने जीवन को ढंग से जीने के लिए संघर्ष करना पड़ता इसे स्पष्ट किया है। रमेश आखरी संतान होने से जीवन भर घिसटता रहा, जिंदगी में उसके संघर्ष का ठहराव नहीं रहा। बचपन में ही उसके मन में अनेक घटनाओं के द्वारा उसने खुद को फालतू है सिद्ध किया था। उसने अपने को आस्तीत्वहीन माना था।

2.3 निर्णय रूका हुआ -

'निर्णय रूका हुआ' सन् 1984 में प्रकाशित हुआ नरेंद्र कोहली का व्यंग्य नाटक है। व्याख्यात्मक और वर्णनात्मक शैली के द्वारा रिश्वतखोरी की अखंड़ परंपरा और सार्वजनिक जीवन के प्रदूषण पर नाटकीय स्थितियों के सहारे चोट करनेवाले प्रसंगों द्वारा व्यंग्य किया है। नाटक का कथ्य एकदम आज का है, आज की अराजकता के तले प्रशासन के भ्रष्टाचार को व्यंग्य वक्रोक्ति शैली के सहारे नाटककार ने नंगा किया है।

नाटककार ने 'निर्णय रूका हुआ' नाटक में आधुनिक काल में दिल्ली जैसे शहर में मकान बनाना हो तो किस तरह समस्याओं का सामना करने के लिए तैयार होना पड़ता है इस पर प्रकाश डाला है। मध्यवर्गीय व्यक्ति को अपना मकान बंगले जैसे दिखने के लिए जीवनभर की पूँजी को इस पर लगाना पड़ता है। इसका बोध कराने के लिए नाटककार ने 'निर्णय रूका हुआ' नाटक की अवधारणा की है। आज के युग में लकड़ी की समस्या का निर्माण होना, लकड़ी की कीमतों में बढ़ौती होना, लकड़ी की अभावग्रस्तता पर प्रकाश डालना आदि बातों को यहाँ उठाया है। नाटककार ने यहाँ पर आधुनिक युग में रिश्वतखोरी के पीछे की कारण मीमांसा को खोजने का प्रयत्न किया है। वर्मा जैसे पत्रकार विभिन्न संदर्भों द्वारा शर्मा को रिश्वतखोरी के विविध आयामों को बताते हैं, पर शर्मा जैसे देशप्रेमी, कर्तव्यनिष्ठ इस बीभत्स, विकट चित्र पर विश्वास नहीं करते हैं। इसी कारण आधुनिक युग में निर्णय लेने की क्षमता में रूकावट आ गई है, इसे यहाँ स्पष्ट किया है।

वास्तव में 'निर्णय रूका हुआ' नाटक के शीर्षक से नरेंद्र कोहली ने युगों-युगों से चले आए निर्णयों, घटनाओं, समस्याओं के आधार पर सरकार के रूकावटी धोरण पर चिंतन करते हुए देश को रिश्वतखोरी, शोषण, अत्याचार जैसे भयंकर कीटाणु का सामना करना पड़ रहा है इस पर चिंतन किया है। यह कीटाणु जनता के जीवन को दिन-ब-दिन चूसता जा रहा है, पर इसकी हत्या का निर्णय अभी तक नहीं हुआ है। इस कथ्य को वर्मा नाटक में अनेक पुरातण घटनाओं, सच्ची घटनाओं का सहारा लेकर अपने निर्देशन में मूल नाटक के पात्रों से अभिनय करके एक ही दृश्य बंध पर नए तंत्र के द्वारा चित्रित कर आधुनिक युग में मकान की लकड़ी आधी किमत देकर लाने की सलाह देता है। शर्मा इसे धोका-धड़ी, गंदापन, देशद्रोही मानकर मना करता है। पर वर्मा उसे अपने बच्चों के मुँह से घास निकालकर शोषणकर्ता व्यापारियों के मुँह में देने की कल्पना से दूर हटाने का प्रयास करता है।

कथावस्तु -

दिल्ली जैसे बड़े शहर में नाटक के नायक शर्माजी एक मकान बनवा रहे हैं। नरेंद्र कोहली इस नाटक द्वारा यह बताना चाहते हैं कि मकान बनाते समय महानगरीय मध्यवर्गीय लोगों को विभिन्न समस्याओं का सामना करके अपने स्वप्न की पूर्ति कैसे करनी पड़ती है, इसे स्पष्ट किया है। नाटककार नाटक में नए तंत्र का प्रयोग करके एक ही दृश्य बंध पर पात्रों से अभिनय करके समस्या के विचित्र रूप को जनता के सामने लाता है। इससे जनता यह तय कर सके की आधुनिक युग की रफ्तार में हम अपने महत्त्वपूर्ण निर्णय किस प्रकार ले कि हमारा उद्देश्य सफल हो जाए।

नाटक के मुख्य पात्र शर्मा द्वारा दिल्ली में मकान बनाने का प्रयत्न करना, आर्किटेक्ट श्रीवास्तव द्वारा मकान का नक्शा बनाकर शर्माजी को मकान में लकड़ी का उपयोग करके बंगले जैसे शोभा बढ़ाने की तरकीब बताना, मकान की लकड़ी के लिए पचास हजार रुपयों की जरूरत होना लकड़ी की अलमारियाँ, शेल्फे बनाने पर घर की रौनक बढ़ने पर श्रीवास्तव द्वारा बल देना, श्रीवास्तव की बात मानना शर्माजी के लिए कठिन होना, लकड़ी के दाम पर दोनों में बहसें शुरू होना, शर्मा को लकड़ी की महँगाई उसके उत्पादन पर आयी आँच के पीछे श्रीवास्तव द्वारा बढ़ती हुई जनसंख्या का कारण बताना, शर्मा द्वारा व्यंग्य करते हुए कहना- ''सब इन पंजाबियों के कारण है। सारा शहर बसता था यहाँ। किसी को कोई तंगी नहीं थी। इनके आ जाने से शहर छोटा

पड़ गया। मकान कम हो गए और इनका शौक तो देखो। बाप अलग मकान बनाएगा, बेटा अलग। खाने को हो न हो, मकान जरूर बनाएँगे....''[46] श्रीवास्तव के पंजाबी दोस्त भी मकान बनवा रहे हैं, इसका किस्सा भी शर्माजी को बताते हैं। श्रीवास्तव के अनुसार मकान की लकड़ी राजनीति के कारण मँहगी हो गई है। शर्माजी को फिर से पैसे का प्रबंध करने की सूचना देना है। सावित्री चिंता में पड़कर कहती है कि इतना पैसा कहाँ से लाए। श्रीवास्तव उन्हें कर्ज लेने की सूचना देता है। शर्मा इस पर सोचते हैं कि मकान पूरा करना आवश्यक है परंतु हर एक की इच्छापूर्ती का ध्यान रखना उन्हें कठिण लगता है। इसी दौरान उनकी बेटी गीता रंगीन टी. वी. के लिए अपने पिताजी शर्मा से आश्वासन माँगती है। शर्मा द्‌वारा वचन देने पर सावित्री उन्हें दशरथ के वचन की याद दिलाकर टोकती है। शर्माजी अपनी पत्नी को कैकेयी का उदाहरण देकर उसका संतान से होनेवाला प्रेम और उसकी सुंदरता पर उसका आत्मिक होने का संदर्भ देकर व्यंग्य करते हैं। शर्माजी गीता को परिवार के बाकी सदस्यों को बुलाकर लाने को कहते हैं, ताकि सबके सामने वह अपना निर्णय बताएँगे। इस पर उनका छोटा बेटा निकुंज व्यंग्य से पड़ोसियों को भी बुलाता ताकि उन्हें किन शर्तों पर टी. वी. देखने को मिलेगा। नाटककार यहाँ पर शर्माजी के पारिवारिक संबंधों को उजागर करते हैं।

शर्मा द्‌वारा बुलाने पर परिवार के सभी सदस्य इकट्ठा होते हैं। शर्मा मकान को पूरा करने की समस्या को सभी के सामने प्रस्तुत करता है। सतीश द्‌वारा उलटा-सीधा बोलने पर शर्माजी उसे डांटते हुए कहते हैं- ''पहले बाप बच्चों को नैतिकता सिखाता था, अब बच्चे बाप को अनैतिकता सिखाते हैं।''[47] शर्माजी सतीश के विचारों का नतीजा बताते हैं कि तुम यदि मकान बनाओगे तो तुम और तुम्हारी पत्नी तथा बच्चे हक से रहेंगे बाकी बिना अधिकार के रहेंगे लेकिन पिता के घर में सबका अधिकार एक जैसा रहता है। यह प्रकृति का नियम है। बच्चे शर्मा को कर्ज लेने को कहते हैं परंतु वे कर्ज निकालकर अपना भविष्य बंधक नहीं रखना चाहते। गीता की रंगीन टी. वी. की मांग पर सतीश उसे डांटता है। गीता द्‌वारा मकान को जायदाद मानने पर सावित्री उसे डांटती है। इस पर गीता गुस्से में आकर कहती है- ''पता नहीं, इस देश में कानून किसके लिए बनते हैं। यहाँ तो स्वयं स्त्री होकर भी माँ नहीं चाहती कि बेटी को जायदाद का हिस्सा.....''[48] शर्माजी अंत में अपना गाड़ी बेचने का निर्णय सभी को सुनाते हैं। इससे सावित्री भड़कती है।

सावित्री ने गाड़ी अपने शौक के लिए खरीदी है। वह पढ़-लिखकर नौकरी न करने पर भी उसका शर्माजी के आय पर, घर की चीजों पर अपना अधिकार मानती हैं। शर्माजी का बेटा सतीश व्यापारी होने के कारण व्यापार के सिलसिले में गाड़ी को अधिक प्रभावशाली मानना है। शर्माजी के दूसरे बेटे निकुंज के लिए मकान पूरा होने या न होने में कोई मतलब नहीं है। उसकी तत्काल दो हजार रुपए की आवश्यकता है ताकि वह कॉलेज से निकाली गई कश्मीर ट्रीप में कश्मीर जाना चाहता है। इस प्रकार नाटककार ने शर्मा के परिवारवाले घर की समस्याओं से दूर भागते हुए दिखाई देते हैं।

प्रस्तुत नाटक में शर्मा के परिवार में मकान संबंधी की बहस के दौरान उनके पत्रकार मित्र वर्माजी का आगमन नाटक में नाटकीयता को बढ़ाता है। वर्माजी के साथ उनके मित्र माहेश्वरी आए हैं जो टिमरनी के लकड़ी के व्यापारी हैं। शर्माजी उन्हें अचानक आने का कारण पूछते हैं। वर्मा द्वारा समाचार भेजने पर स्वागत की तैयारी करने की सूचना देना जरूरी है। सावित्री वर्माजी की व्यंग्यपूर्ण बात पर व्यंग्य करती हुई कहती है- "अच्छा जी ! नेताओं के स्वागत समारोहों के समाचार भेजते-भेजते अब अपने स्वागत के लिए भी तोरणों की बात सोचने लगे।"[49] शर्माजी माहेश्वरी के पास अपने मकान के लिए सस्ती लकड़ी की बातें करते हैं। वर्मा उनसे नाराज है कि उनके मित्र होकर भी शर्माजी ने मकान की सूचना तक नहीं दी, जिससे मकान की हर दिक्कतों में शर्माजी का मकान अधबना है, जो पूरा नहीं हो पाया। वर्माजी पत्रकार होने के कारण अपनी पहचान के द्वारा शर्माजी को विशेष कोटे का साहित्य सरकारी अफसर, मंत्री, राजनीतिज्ञ से दे पाते। वर्मा द्वारा शर्माजी को लकड़ी कितनी चाहिए पूछते ताकि वे दिल्ली के चौथाई भाव से लकड़ी देने का वादा करते हैं। शर्मा इतनी सस्ती किंमत को सुनकर चौंकते हैं। वर्मा अपनी बात की पुष्टी के लिए लकड़की के व्यापारी लकड़ी को टिमरनी से किस प्रकार लाते हैं यह स्पष्ट करने के लिए पात्रों के द्वारा परिवार के लोगों को निर्देशन करके नाटक रचकर उसे मंचीत करके समस्या का हल ढूँढ़ा जाता है। नाटककार ने वर्मा पत्रकार है जो भारतीय जनता की आवाज है, क्योंकि पत्रकार ही अन्याय के खिलाफ जनता की ओर से आवाज उठाता है लेकिन यहाँ पर अपने स्वार्थ के लिए पत्रकार ही अवैध मार्ग को अपनाने की बातें करता है, इसे नाटककार ने स्पष्ट करने का प्रयत्न किया है।

शर्मा ग्राम भटारा के निवासी हैं जो अब दिल्ली में रहते हैं। उन्होंने ग्राम भटारा में एक मकान खरीदा है, ऐसा प्रमाण-पत्र रिश्वत देकर पटवारी से लेना चाहते हैं। पटवारी पहले वर्मा को न पहचानने का नाटक करता तो वर्मा उसे भारत सरकार दिखाते हैं। इस पर पटवारी- ''भारत सरकार को कैसे नहीं पहचानूँगा ? भारत सरकार तो मेरी अन्नदाता है, माई-बाप है। मैं सेवक किसका हूँ। भारत सरकार की प्रधानमंत्री को तो मैं चित्र में भी पहचान जाता हूँ।''[50] इस प्रकार सौ की नोट थामकर उससे प्रमाण-पत्र लेकर लकड़ी को काटकर बढ़ियाँ खिड़कियाँ, दरवाजे और अलमारियाँ तैयार करके ट्रक में भर दी जाती हैं। यहाँ 'भारत सरकार' शब्द का प्रयोग घूसखोरी का संकेतार्थ है। इसे इस शब्द के संकेत के माध्यम से स्पष्ट करके घूसखोरी के माहौल में चलनेवाले संकेतों पर व्यंग्य किया है। वर्मा तब तक शर्माजी के साथ वकील के पास जाकर इन सामग्री को ग्राम भटारा से दिल्ली ले जाने की इजाजत का सर्टिफिकेट मैजिस्ट्रेट साहब से प्राप्त करने को कहते हैं। वर्मा वकील साहब को शर्मा ग्राम भटारा में एक मकान लेते हैं, पर मकान पुराना होने से उसे टहाकर लकड़ी दिल्ली लेकर जाना चाहते हैं। वकील वर्मा की बातों पर इधर-उधर की बातें करना शुरू करने पर वर्मा वकील को अपनी किंमत लेकर जल्दी से सर्टिफिकेट देने का सुझाव देते हैं। इस तरह नाटककार ने रिश्वत के बिना कोई भी काम बिना झंझट से आसानी से पूरा नहीं होता। प्रशासन में स्थित भ्रष्टाचार पर यहाँ नाटककार ने करा व्यंग्य किया है।

वर्मा रिश्वत का सहारा लेकर पटवारी के पास से प्रमाण पत्र हासिल करके वकील द्वारा मैजिस्ट्रेट को कानूनी तौर पर बहस करके पटवारी का प्रमाणपत्र दिखाकर सर्टिफिकेट प्राप्त करना चाहते हैं। वकील वर्मा के विचारों को सुनकर मैजिस्ट्रेट के पास जाकर युक्तिवाद करना शुरू करती है- ''बात यह है, मैड़म ! कि इन बेचारे के साथ धोका हो गया है। मकान तो इन्होंने रहने के लिए ही खरीदा था, पर धोखा हो गया।''[51] मैजिस्ट्रेट पटवारी के प्रमाणत्र को देखकर धोखा उन्हें नहीं मुझे देना चाहते हैं कि मकान परसों खरीदा और आज ठहाने का सर्टिफिकेट माँगते हो। लेकिन पटवारी जैसे सरकारी अधिकारी की मुहर को गलत साबित करना कठिन है इसलिए सर्टिफिकेट देते हैं। वर्मा वकील की फीस देकर ट्रक को चुंगी अधिकारी के पास लाता है। वह भी अपना अधिकार स्पष्ट करते हुए- ''हम तो हवा और पानी से भी चुंगी लेते हैं, तुम तो आदमी हो। पिछली बार एक साहब इस शहर की लड़की ब्याह कर ले गए, उनसे भी चुंगी ले ली थी।''[52] इसलिए सर्टिफिकेट के

लिए जो पैसा मैजिस्ट्रेट को दिया था, वही हमको भी दे जाओ। वर्मा पत्रकार होने के कारण समाचार पत्र में खबर छापने की धमकी देते हैं। चुंगी अधिकारी वर्मा की धमकी सुनकर उन्हें फोटो और नीचे नाम, पता भी छापो कहता है ताकि आगे से माँगने के पहले जनता चुंगी देकर जाएगी। चुंगी अधिकारी वर्माजी को बताते हैं कि यह सब अपनी जेब न जाकर ऊपर तक सबको खिलाया जाता है। इसीकारण चुंगी अधिकारी किसी से डरता नहीं है। नाटककार ने यहाँ पर रिश्वतखोरी को सरकारी प्रश्रय के कारण जनता का उसके खिलाफ उठा हुआ आवाज भी अपने-आप दबकर मिट जाता है यह स्पष्ट किया है।

वर्माजी शर्माजी को लेकर चुंगी अधिकारी के बाद पुलिस इन्स्पेक्टर के पास आते हैं। पुलिस इन्स्पेक्टर भी वर्मा की बातों पर स्पष्ट करता है कि ''मामला साफ है। मकान गिरता। उसके नीचे दबकर कोई मरता। हम हत्या का मामला बनाते। तुम डरकर हमारी सेवा करते। और तुमने उसमें रूकावट डाल दी.....''[53] इस प्रकार पुलिस इन्स्पेक्टर उन्हें सलाह देते हैं कि आप लोग पढ़े-लिखे हो तो परस्पर सहयोग से मामले को मिटाने की सूचना देता है। पुलिस इन्स्पेक्टर वर्माजी को पहले ही स्पष्ट करता है कि किसी की धमकी से वह डरनेवाला नहीं है। वर्माजी और शर्मा आखरी भोग उस पर डालकर ट्रक को दिल्ली लेकर जाते हैं। नाटककार ने यहाँ पर सरकारी नौकरों में फैले रिश्वतखोरी के कीटाणु आम जनता का शोषण करते हैं। पुलिस व्यवस्था जनता का संरक्षण करने की वजह उन पर अत्याचार करती है। पुलिस के मुँह में हर समय हरामखोर, गरसाल, साले जैसी गंदी गालियाँ होती हैं जो असभ्यता का लक्षण है। नाटककार यहाँ पर रिश्वतखोरी के कीटाणु को बाहर निकलवाना मुश्किल है इसे स्पष्ट करता है, क्योंकि उन पर किसी भी औषधि या दवा का असर नहीं हो सकता है।

वर्मा द्वारा दर्शाए गए सरकारी रिश्वतखोरी के दृश्यों को देखने के बाद शर्मा इसका विरोध करता है, इसे मानने से इन्कार करता हुआ कहता है कि वह तो ईमानदारी से पूरी कीमत देकर व्यापारियों से ही यह लकड़ी खरीदेगा। ग्राहक द्वारा ईमानदारी से खरीदी जानेवाली वस्तु किस तरह व्यापारों द्वारा बेईमानी, धोकाधड़ी से कम कीमत में लाकर ईमानदार जनता का शोषण होता है। नरेंद्र कोहली ने इस मूल कथ्य को अपने इस प्रयोगशील नाटक में वर्मा द्वारा निर्देशित नाटक के सहारे मुख्य नाटक के पात्रों को निर्देशित पात्र का चरित्र स्पष्ट करने का संकेत देकर दृश्य

सज्जा को बिना परिवर्तित करके दिखाया है कि टिमरनी के लकड़ी के सरकारी डिपो इंचार्ज की पत्नी हर समय बीमार होने के कारण हरिसिंह जीवन से ऊब गया है। डॉक्टरों का मानना है हरिसिंह की पत्नी को कैंसर या टी. बी. जैसी भयावह बीमारी हो गई है, जिसका इलाज भोपाल या इंदौर ही हो सकता है। इसी दौरान टिमरनी के लकड़ी के व्यापारी माहेश्वरी अपने साथ करुणाजी को लेकर हरिसिंह के घर आते हैं। करुणाजी की पहचान हरिसिंह से करते समय वह एक अच्छी अभिनेत्री है जो फिल्मों में काम करती है। माहेश्वरी द्वारा हरिसिंह की पत्नी के बीमारी का हालचाल पूछकर दिलासा देते कि तुम इलाज के लिए मेडिकल इंस्टिट्यूट में लेकर जाओ। माहेश्वरी दुःख प्रकट करते समय हरिसिंह को कहते हैं कि जीवन का सुख बहनजी को, तुमको क्या मिला। तुम्हें जीवन पर तन और मन दोनों के सुख से वंछित रहना पड़ा। हरिसिंह की पारिवारिक स्थिति पर दुःख व्यक्त करते हुए माहेश्वरी करुणा के अभिनय की तारीफ करना शुरू करके उन्हें हरिसिंह के साथ लव-सीन का अभिनय पेश करने को कहते हैं। इसके बाद चाय की माँग हरिसिंह को करते तो बीमार पत्नी के कारण अब चाय कौन करेगा हरिसिंह कहते तो माहेश्वरी करुणा को चाय करने को कहकर फिर हरिसिंह के साथ चाय का विज्ञापन करने को कहते हैं। इस सीन पर डरकर हरिसिंह अंदर झाँकता है, लेकिन पत्नी राधा सोयी है यह देखकर उसके जान में जान आती है। हरिसिंह करुणाजी की ओर उत्तेजना और लोलुपता से देखकर अभिनय की तारीफ करता है। यहाँ पर नाटककार ने माहेश्वरी जैसे महाजन अपने काम को पूरा करने के लिए दूसरों की कमजोरी को पहचानकर उसके सहारे अपने चंगुल में फँसाकर अपना कार्य पूरा करते हैं, इसे यहाँ पर स्पष्ट किया है।

माहेश्वरी द्वारा हरिसिंह के कमजोरी को शस्त्र बनाकर हरिसिंह को घायल किया जाता है। माहेश्वरी हरिसिंह को जीवन में बहुत से पैसे कम समय में हासिल करने की एक तरकीब बताता है। माहेश्वरी फिल्म बनाने का प्रस्ताव रखकर हरिसिंह को बढ़िया हीरोइन के साथ घूमने की लालसा बताता है। हरिसिंह द्वारा माहेश्वरी की बातों पर "ठाठ हैं सेठ तुम्हारे ! हमारी तो साली नौकरी ही बीवी की.... बीवी क्या बीवी का भूत है। उसका इलाज भी नहीं हो पाता।"[54] माहेश्वरी अपने मन की तरकीब हरिसिंह को बताता है कि हरिसिंह पचीस हजार रुपए माहेश्वरी से भेंट लेकर फिल्मों में लगाए ताकि फिल्म की सफलता पर वह सोचता है कि करोड़ों रुपए आएँगे और उसी से

माहेश्वरी का कर्जा आदा किया जाएगा। इस पचीस हजार के बदले में माहेश्वरी का एक छोटा-सा काम हरिसिंह को करना है। सरकार की ओर से लकड़ी की जो कटवाई चल रही है वहाँ पर माहेश्वरी के ट्रक हैं। हरिसिंह को उनमें से पचीस ट्रक सरकारी रेकॉर्ड में दर्ज नहीं करना है। वह ट्रक दिल्ली, मुंबई जाकर जब वापस आएँगे तो डिपो को आग लगाकर उसमें रजीस्टार भी फेंग देंगे ताकि असलियत का पता किसी को नहीं होगा। हरिसिंह को इस कल्पना पर अपनी नौकरी चली जाने का डर है। माहेश्वरी उसे कहता है- ''उत्पादन की व्यवस्था तो प्रकृति की है, पर वितरण की व्यवस्था तो मनुष्य की बनाई हुई है। जिसके पास अधिकार है, वह वितरण व्यवस्था को ऐसा मोड़ता है कि सारा लाभ उसे ही पहुँचे। जिनके पास अधिकार नहीं है, वे व्यवस्था को भ्रष्ट कर, या व्यवस्था के बाहर हो, उसे तोड़कर अधिक लाभ पाने का प्रयत्न करते हैं। क्या समझे, हरिसिंह ? राम नाम की लूट है....?''[55] माहेश्वरी विभिन्न बातों, लालच से हरिसिंह का मनपरिवर्तन करने का प्रयास करके अपना उद्‌देश्य सफल करता है। नाटककार ने यहाँ पर महाजन अपने ध्येय की पूर्ती के लिए दूसरों की कमजोरी को शस्त्र बनाकर अपना काम करते समय रिश्वत, शोषण, अत्याचार से अपने फायदे का सोचता है और उसे पूरा भी करता है, यह स्पष्ट किया है।

वर्मा नाटक समाप्त होने की सूचना देते हैं, पर गीता, सावित्री, सतीश को आगे की बातों में उत्सुक्ता है कि नाटक का अंत किस प्रकार होता है। वर्मा अंतिम दृश्य को महत्त्वपूर्ण नहीं मानते फिर भी सबकी इच्छा के अनुसार नाटक का अंतिम दृश्य कोर्ट का दिखाया जाता है। हरिसिंह कोर्ट के सामने अपराधी बनकर खड़ा है तो माहेश्वरी गवाह के कटघरे में खड़े होकर कोर्ट के सामने हरिसिंह की जानकारी देता है। हरिसिंह की पत्नी बहुत सालों से बीमार होने से पत्नी की ओर से जीवन में शारीरिक और मानसिक सुख न मिलने से हरिसिंह बाजारी लड़की करुणा के जाल में फँसकर अनहोनी हरकत कर बैठता है। हरिसिंह अपना अपराध स्वीकार करता है। मैजिस्ट्रेट द्‌वारा उसे बीमार पत्नी का ध्यान कैसे नहीं हुआ, पूछने पर हरिसिंह कहता है- ''उसे तो मरना ही था, सरकार ! अब तक न मरी होगी तो अब मर जाएगी।''[56] नाटककार ने यहाँ पर माहेश्वरी जैसे व्यापारी महाजन सरकारी अफसरों की कमजोरी को ढूँढ़कर उसे रिश्वत देकर खरीदते हैं, ताकि शोषण, अत्याचार से उसे पीड़ित करके अपना उद्‌देश्य साध्य करते हैं।

वर्मा द्वारा दर्शाए नाटक के प्रसंगों से शर्माजी सहमत नहीं होते हैं। उनका मानना है कि देश के सारे लकड़ी के डिपो इंचार्ज की पत्नी बीमार तो नहीं हो सकती। वर्मा के मतानुसार पत्नी स्वस्थ होगी तो बेटी जवान होगी, जवान बेटी की शादी के लिए दहेज देना पड़ेगा, लड़का बेकार होगा, उसे नौकरी दिलवाने के लिए, रिश्वत देने के लिए महाजन के चंगुल में फसना होगा। वर्मा शर्माजी को रिश्वतखोरी की व्याख्या स्पष्ट करते हुए कहते हैं- ''निन्यानवे प्रतिशत ! एक ओर बड़ी जिम्मेदारियाँ और खाली जेबें, दूसरी ओर भरी थैलियाँ और उत्तरदायित्व-शून्यता। फिर राजनीति में ऊपर से नीचे तक रिश्वतखोरी की अखंड़ परंपरा। वहाँ और हो ही क्या सकता है।''[57] शर्मा इन्हीं विचारों को सुनकर पुलिस, समाचार पत्र, सरकारी बड़े अफसरों के पास जाकर इसका विरोध करने की बात पर माहेश्वरी कहता है कि उनके पास भी यह सब जानकारी है। माहेश्वर एक बस लूटने का उदाहरण देता है कि डाकूओं ने बस लूटने पर माल को गिना तो आठ सौ रुपए होने पर डाकूओं ने पैसे वापस सवारियों को देने पर एक सवारी ने प्रश्न पूछने पर डाकूओं ने पुलिस को एक बस लूटने पर तीन हजार रुपए रिश्वत देनी पड़ती है। इसमें बाइस सौ रुपए डालकर ठानेदार को देने से अच्छा पैसे वापस करना। वर्मा की बातों को सुनकर शर्मा उन्हें देश के ईमानदार आदमी से पूरे मूल्य देकर लकड़ी खरीदना चाहते हैं। निकुंज सरकारी डिपो से खरीदने की सलाह देता है। परंतु वर्मा मंत्रियों में भी रिश्वतखोरी पर प्रकाश डालना चाहते हैं लेकिन माहेश्वरी राजनीतिक पार्टी का प्रश्रय है। उसकी पक्षधर सरकार सत्ता पर होने के कारण वह अपना विरोध दर्शाता है। वर्मा इस नाटक को एक मिथक कहानी के सहारे मंत्रियों का भ्रष्टाचार का रूप प्रस्तुत करता है। नाटककार ने राज्य का धन अनुचित बातों पर खर्च करने पर राज्य की स्थिति कैसी दयनीय बनती है, इस बात की संभावना पर यहाँ प्रकाश डाला गया है।

वर्मा द्वारा निर्देशित नाटक में राजा द्वारा इस वर्ष राज्य की आय सौ करोड़ घोषित की जाती है परंतु स्वर्गीय महाराज की शरदप्रसाद की जंगी तैयारी में बहुत सारा धन खर्च होने की संभावना से राज्य की पूरी आय समाप्त होने का डर मंत्री व्यक्त करते हैं। मंत्री इस आय की बढ़ौती से गाँव में बदलाव लाने का प्रयास करते हैं- ''महाराज ! सहस्त्रों ग्रामों में पीने का पानी तक नहीं है। वहाँ कुएँ खुदवाने हैं। रोगियों के लिए चिकित्सालय नहीं है। बच्चों के लिए पाठशालाएँ नहीं हैं। प्रजा या तो मर रही है या देश छोड़-छोड़ कर जा रही है....''[58] यहाँ पर

14146
A

आधुनिक युग बोध उभर उठा है। वर्मा आगे स्पष्ट करते हैं कि राजकुमार और राजकुमारी की माँगों पर धन का व्यय करना मंत्री को पसंद नहीं है। पर महाराणी धन प्रजा का नहीं राजा का होता है, इसलिए वह राजा के लिए ही खर्च होना चाहिए मानती है। वर्मा की बातों को सुनकर शर्मा इन्हें अतिशयोक्तिपूर्ण मानकर विरोध करते हुए आधुनिक युग चल रहा है यह वर्मा को कहता है। वर्मा आधुनिक युग के वातावरण का चित्र शर्माजी के सामने खिंचता है कि- ''आधुनिक युग के राष्ट्रपति के पोते को पचहत्तर पैसे का डोसा खिलाने के लिए भारतीय वायुसेना का विमान बंगलौर जा सकता है.... छोटे-छोटे अधिकारियों, संसद-सदस्यों और विधायकों के घरों के एक महीने के टेलीफोन के बिल आपका मकान खरा कर दें। किस दुनिया में जी रहे हैं आप ? आपका धन देश के विकास में नहीं, शासकों के विकास में खर्च हो रहा है।''[59] नाटककार ने आधुनिक शासन व्यवस्था के खोखलेपन पर व्यंग्य किया है। शर्मा कानून का जिक्र करता है, तो वर्मा कानून को शासन तंत्र ही बताता है। शर्माजी अपने मित्र वर्मा द्वारा निर्देशित नाटक और विचारों से सहमत नहीं होते हैं। शर्मा सच्चाई, वैध ढंग से जीवन को आदर्श रूप में जीने की इच्छा रखते हैं। वर्मा के मार्ग को स्विकार करने में उनकी द्विधा अवस्था बन गई है। परिवार के बाकी सदस्य वर्माजी की ओर अपनी इच्छा-आकाक्षांओं की पूर्ति होगी या नहीं इस प्रश्नभरी दृष्टि से देखते हैं। वर्मा सबके उत्तर देने से पहले शर्माजी का निर्णय क्या है जानना चाहते हैं, क्योंकि उसी पर सबके प्रश्न के उत्तर का निर्णय तय होगा। वर्मा अंत में शर्माजी से कहते हैं कि जब तक तुम्हारा निर्णय तय नहीं होगा तब तक देश तुम्हारे अनिर्णय के कारण ही रूक जाएगा। नाटककार ने यहाँ पर देश की एक व्यक्ति का निर्णय देश की दिशा ही बदलने की क्षमता रखता है। इस तथ्य को 'निर्णय रूका हुआ' नाटक द्वारा स्पष्ट किया है।

नरेंद्र कोहली के प्रस्तुत नाटक के बारे में हरीश नवल लिखते हैं- 'निर्णय रूका हुआ' नाटक में ब्रेढ़तीय प्रतीकवादी रंगमंच और जनवादी रंगमंच का सुखद मिश्रण है। नाटक में नाटक का प्रयोग इसी सहज जनवादी रंग-परंपरा में किया है। रिश्वतखोरी की अखंड़ परंपरा और उससे दुष्प्रभावित हो रहे समाज का सही चित्रण 'निर्णय रूका हुआ' के माध्यम से हुआ है।''[60]

नरेंद्र कोहली चिंतनशील और दूरदृष्टिवाले साहित्यकार हैं। आधुनिक काल में समाज में बढ़ती हुई विभिन्न समस्याओं को देखने पर उनके अंदर का साहित्यकार बेचैन होता है।

समाज को उसके अस्तित्व का बोध कराने की जरूरत महसूस कर उन्होंने आधुनिक समस्या को 'निर्णय रूका हुआ' नाटक में स्पष्ट करने का प्रयास किया है। इस नाटक में नाटककार ने नए तंत्र का प्रयोग किया है। नाटककार की धारणा है कि आधुनिक युग में भौतिक सुविधाएँ, प्रतिष्ठा, पाने के लिए प्रशंसा, घूस, ईमान की निलामी जैसी पगडंडियों का राजमार्ग अपना करते हैं। इसी के बलबूते वह फ्रीज, टी. व्ही., कार, बंगला आदि की वैभव संपन्न जिंदगी पाकर अपने आपको धन्य मानता है। आज महानगरीय जिंदगी में प्रतिष्ठा, बड़प्पन और महत्त्वकांक्षा रूपी जीवणु मध्यवर्गीय लोगों में निर्णय लेने की क्षमता को रोक रहे हैं। मानव जीवन की इस विभिषा को नरेंद्र कोहली ने बड़े मार्मिक ढंग से अपने इस नाटक में उजागर किया है।

आधुनिक युग में महानगरीय जीवन एक दिखावा बन गया है इसे भी नाटककार ने स्पष्ट किया है। आज व्यक्ति कभी तृप्ति का, समाधान का एहसास नहीं करता उसे बड़ा बनने की लालसा हमेशा सताती है। आज के युग में व्यापारियों द्वारा सामान्य जनता का शोषण किस प्रकार किया जाता है। सरकार भी ऐसे व्यापारियों का साथ कैसे देती है। इसे यहाँ चित्रित किया है। आज के युग में धोखा देकर, झूठी कथा का सहारा लेकर मनुष्य अपनी इच्छाओं की पूर्ति करने का प्रयत्न करता है। शर्मा ऐसी परिस्थितियों से दूर भागने की कोशिश करता है।

संक्षेप में नाटककार ने 'निर्णय रूका हुआ' नाटक में अत्यंत गहन विषय को बहुत गहराई से, सहजता से प्रस्तुत किया है। आज के सामाजिक संदर्भों को, मानवीय स्थिति को, आर्थिक विषमता को, राजनीतिक भ्रष्टाचार को, सरकारी व्यवस्था को पकड़कर मानवीय शोषण को 'निर्णय रूका हुआ' के माध्यम से चित्रित करने की कोशिश की है। नाटककार ने नाटक के माध्यम से समाज को कुप्रवृत्तियों, भ्रष्टाचार, रिश्वतखोरी, धोकापन इस गतिविधियों से परिचित कराकर समाज को, व्यक्ति को सजग बनने का संदेश दिया है।

समन्वित निष्कर्ष -

प्रस्तुत लघु शोध-प्रबंध में हमने नरेंद्र कोहली के 'शम्बूक की हत्या', 'हत्यारे' और 'निर्णय रूका हुआ' नाटकों को आलोच्य विषय बनाकर इन नाटकों की कथावस्तु का अनुशीलन किया है। ये तीनों नाटक आधुनिक युगबोध पर प्रकाश डालते हैं। 'शम्बूक की हत्या' एक मिथकीय नाटक है जिसमें पुरातन मिथक के आधार पर आधुनिक युग की अभावग्रस्तता, दरिद्रता, बेकारी,

घुसखोरी पर गहराई से चिंतन किया है। रामायणकालीन 'शम्बूक' का मिथक आधुनिक समयबोध पर गहराई से व्यंग्य करता है। आज प्रशासनीक भ्रष्टाचार, भूखमारी, महंगाई से देश की गति कुंठित बनती जा रही है, नाटक का ब्राह्मण इस देश की कुंठित गति पर प्रकाश डालता है। नाटककार ने इस ब्राह्मण के माध्यम से देश की दयनीयता को मुखरता प्रदान की है। आज अभावग्रस्तता को दूर करने के लिए स्वतंत्र भारत में कोई प्रयत्न नहीं हो रहे हैं बल्कि शोषण की, भ्रष्टाचार की मात्रा इतनी बढ़ रही है कि जिससे सामान्य व्यक्ति संत्रस्त हो रहा है, इसे स्पष्ट किया है। शासन का पाप लोगों की अकाल मृत्यु के लिए कारण बन बैठा है, इसे भी यहाँ स्पष्ट किया है। गरीबों को बेदखल किया जा रहा है, राजनीति का गुनहगारीकरण हो रहा है, राजनीति के प्रश्रय से भ्रष्टाचार तेज गति पकड़ रहा है, भ्रष्टाचार सर्वसामान्य बनता जा रहा है, इस पर प्रभावी रूप में यहाँ सोचा है।

'हत्यारे' नाटक में अधिक संतानें होने पर माता-पिताजी का दुर्लक्ष होने से गैरहरकतें करके बरबाद होनेवाले संतान की समस्या पर प्रकाश डाला है। इस नाटक में मुंबई महानगरीय जन-जीवन की विकट समस्याओं का चित्रण देखने को मिलता है। इसमें माता-पिता का दुर्लक्ष होने पर महानगरीय तश्करी व्यवसाय के लोगों के सान्निध्य में रमेश जैसे नवयुवकों का आने से परिवार की हुई दुर्दशा पर गहराई से चिंतन किया है। इस नाटक में महानगरीय पुलिस व्यवस्था द्वारा जनता पर होनेवाले अत्याचारों का लेखा-जोखा दो शेठों के बच्चे गरीब लड़की पर बलात्कार करते, गरीब बाप के बेटे की मृत्यु आदि पर पुलिस माहौल द्वारा ली जानेवाली रिश्वत, वैजयंती जैसी वेश्या की तरफ देखने की समाज की दृष्टि, महानगरीय जीवन की आत्मकेंद्रितता, खन्ना जैसे गुंड़ा लोगों की आम जनता पर होनेवाली दबावी नीति आदि के माध्यम से प्रस्तुत किया गया है। बुरी संगति में जानेवाले रमेश की हत्या इस नाटक का चिंतनीय विषय बन बैठा है। रमेश परिस्थिति का दास बनकर तश्करी व्यवसाय में प्रविष्ठ होता है। रमेश का यह व्यवसाय परिवेश की उपज लगता है। इस संदर्भ में सुरेंद्र वर्मा के 'दो मुर्दों के लिए गुलदस्ता' उपन्यास के भोला नामक युवक की याद आती है, जो परिस्थितिवश मुंबई शहर में अड़खल्ड में समाविष्ठ होता है। रमेश इसी परिवेश की उपज है जो माता पिता द्वारा दुर्लक्ष होने के कारण गैरसंगति में अटककर गुंड़ा बनता है।

'निर्णय रूका हुआ' नाटक में मध्यविन परिवार द्वारा महानगर में घर बांधते समय आनेवाली दिक्कतों का चिंतन किया गया है। इस नाटक का पात्र शर्मा दिल्ली शहर में घर बांधने का अरमान रचता है परंतु लकड़ी की महंगाई के कारण और अन्य लोगों द्वारा दी जानेवाली बार-बार की सूचनाओं के कारण घर बांधने में अनेक कठिनाइयों का सामना उसे करना पड़ता है। वह अपने परिवारवालों का सुझाव लेकर महँगी लकड़ी खरीदने के बारे में विचार विमर्श करता है। इस नाटक में सरकार के प्रश्रय से पनपनेवाला भ्रष्टाचार, लकड़ी काटनेवाले लकड़ी के व्यापारियों द्वारा ग्राहकों को होनेवाली धोखेधड़ी, झूठे कारण दिखाकर लकड़ी की महँगाई का भूत ग्राहकों के सामने खरा करने की व्यापारियों की नीति, लकड़ी खरीदते समय होनेवाली रिश्वतखोरी, लकड़ी को प्राप्त करने के लिए सरकारी लोगों की दिखाई जानेवाली लालच आदि का चित्रण करके इस नाटक में घर बांधने के बारे में होनेवाले निर्णय के विलंब पर नए तरीके से नाटककार ने सोचा है। यह नाटक विषय और विषयवस्तु की दृष्टि से बिलकुल नया प्रयोग लगता है।

संक्षेप में आलोच्य तीनों नाटक विविध विषयों पर लिखे गए नाटक हैं। 'शम्बूक की हत्या' प्राचीनता और नवीनता का अच्छा समन्वय है। 'हत्यारे' दुर्लक्षित संतान की आवारागर्दी पर चिंतन करने को बाध्य करता है। 'निर्णय रूका हुआ' में सरकार के प्रश्रय से बढ़नेवाली लकड़ी की महंगाई के कारण लकड़ी का घर बांधनेवाले मध्यवर्गीय व्यक्तियों की निर्णय क्षमता में उत्पन्न रूकावट पर प्रकाश डालता है। स्पष्ट है कि नाटककार ने विविध विषयों पर विविध प्रकार की चिंतन शैली को बढ़ावा देकर नए-नए विषयों से संपन्न आलोच्य नाटकों का निर्माण करके अपनी प्रयोगशीलता का परिचय दिया है।

संदर्भ सूची

1. डॉ. जी. कमलाधरन, आधुनिक हिंदी नाटक : मिथक का प्रयोग और प्रभाव, पृ. 166
2. वही, पृ. 166
3. वही, पृ. 167
4. वही, पृ. 166
5. वही, पृ. 166
6. नरेंद्र कोहली के समग्र नाटक - (शम्बूक की हत्या), पृ. 9
7. वही, पृ. 10
8. वही, पृ. 11
9. वही, पृ. 16
10. वही, पृ. 18
11. वही, पृ. 18
12. वही, पृ. 20
13. वही, पृ. 20
14. वही, पृ. 21
15. वही, पृ. 24
16. वही, पृ. 25
17. वही, पृ. 26
18. वही, पृ. 27
19. वही, पृ. 33
20. वही, पृ. 34
21. वही, पृ. 37
22. वही, पृ. 38
23. वही, पृ. 39

24. नरेंद्र कोहली के समग्र नाटक - (शम्बूक की हत्या), पृ. 46
25. वही, पृ. 53
26. डॉ. जी. कमलाधरन, आधुनिक हिंदी नाटक : मिथक का प्रयोग और प्रभाव, पृ. 173
27. वही, पृ. 173
28. वही, पृ. 173
29. वही, पृ. 173
30. नरेंद्र कोहली के समग्र नाटक - (हत्यारे), पृ. 56
31. वही, पृ. 58
32. वही, पृ. 62
33. वही, पृ. 66
34. वही, पृ. 69
35. वही, पृ. 70
36. वही, पृ. 73
37. वही, पृ. 76
38. वही, पृ. 83
39. वही, पृ. 84
40. वही, पृ. 91
41. वही, पृ. 97
42. वही, पृ. 102
43. वही, पृ. 102
44. वही, पृ. 102
45. सं. नर्मदाप्रसाद, व्यक्तित्व एवं कृतित्व : नरेंद्र कोहली, पृ. 100
46. नरेंद्र कोहली के समग्र नाटक - (निर्णय रूका हुआ), पृ. 104
47. वही, पृ. 110
48. वही, पृ. 113

49. नरेंद्र कोहली के समग्र नाटक - (निर्णय रूका हुआ), पृ. 115
50. वही, पृ. 120
51. वही, पृ. 125
52. वही, पृ. 128
53. वही, पृ. 130
54. वही, पृ. 140
55. वही, पृ. 145
56. वही, पृ. 150
57. वही, पृ. 150
58. वही, पृ. 155
59. वही, पृ. 156
60. सं. नर्मदाप्रसाद, व्यक्तित्व एवं कृतित्व : नरेंद्र कोहली, पृ. 94